पॉपुलर एजुकेशन सिरीज़–3

हिमाचल प्रदेश के जनसंघर्ष

न्याय के लिए बढ़ते कदम

जितेन्द्र सिंह चाहर

हिमाचल के जनसंघर्ष

न्याय के लिए बढ़ते कदम

जितेन्द्र सिंह चाहर

सीमित वितरण हेतु

जनहित में

पॉपुलर एजूकेशन एण्ड एक्शन सेंटर (पीस)

ए.124/6 दूसरी मंजिल कटवारिया सराय, नई दिल्ली – 110016
फोन व फैक्स : 011–26968121, 26858940
ईमेल : peaceact@vsnl.com

द्वारा प्रकाशित

अगस्त, 2010

एक शांतिप्रिय प्रदेश में कोलाहल आखिर क्यों?

हिमाचल प्रदेश का भू–भाग अपनी पहचान एवं इतिहास के लिए एक राज्य के रूप में प्रशासनिक गठन की तारीख का मोहताज नहीं है। प्रकृति के वरदानों से लबरेज यह क्षेत्र मनुष्य एवं प्रकृति के रिश्तों की एक मिसाल तब तक बना रहा जब तक प्राकृतिक संपदा का दोहन मुनाफे के लिए करने वालों का पर्दापण यहां नहीं हुआ था। इन मुनाफाखोरों के **'सभ्य बनाने'**, **'विकास करने'** और **'टूरिज़्म का डेवलपमेंट'** करने के लबादे की हकीकत यहां के लोग धीरे–धीरे समझ चुके हैं।

'ईस्ट इंडिया कंपनी', 'ब्रिटिश राज' तथा **'स्वतंत्र भारत'** के संचालकों तथा नियंताओं ने इन्हीं लबादों का सहारा लिया था। ब्रिटिश राज के समय की अर्थव्यवस्था के लिए यह अत्यंत आवश्यक नहीं था कि वे प्रकृति के साथ व्यापक पैमाने पर हस्तक्षेप करें। स्वतंत्र भारत में **'नेहरूयुगीन'** अर्थव्यवस्था में भी इस तरह की ज़रूरत की अत्यधिक आवश्यकता नहीं महसूस की गयी थी परंतु इस दिशा में कदम उठने शुरू हो गये थे और नेहरू के **'आधुनिक मंदिरों'** में से एक भाखरा बांध की शुरूआत की जा चुकी थी। उस वक्त भी इस बात का ध्यान रखा जा रहा था कि प्रकृति से उतनी ही चीज़ों (खनिजों, पानी, पत्थरों, लकड़ियों) को लिया जाय **जितनी एक नवस्वाधीन भारत के निर्माण के लिए आवश्यक है। मुनाफा अर्जित करना या निर्यात करना उस वक्त के मुख्य एजेण्डे में शामिल नहीं था।**

परंतु पिछले 20–25 सालों में **'राष्ट्र राज्य'** की बदलती भूमिका, पूंजी के बदलते चरित्र तथा पूंजीवाद, जो समय–समय पर अंतिम सांसे लेने लगता है, को बचाने के लिए प्राकृतिक संसाधनों खासतौर पर खनिजों, पानी का मुनाफे के लिए इस्तेमाल बढ़ा है। नीतियों,

कानूनों, ढ़ांचों और प्रक्रियाओं का उदारीकरण तथा व्यापार, वाणिज्य, उत्पादन के निजीकरण के भूमंडलीकरण तथा भोजन, शिक्षा और स्वास्थ्य को भी मुनाफे के प्रमुख जुगाड़ों में शामिल करने के कारण स्थितियां और भी जटिल और अझेल होती जा रही हैं।

इन हालात में भारतीय शासकों द्वारा विश्व व्यापार की शर्तों पर आंख मूदकर दस्तखत करने के कारनामे ने कोढ़ में खाज का काम कर डाला।

'विश्व व्यापार संगठन' का सदस्य बनकर देश की सत्ता के नियंताओं ने न केवल देश की **'संप्रभुता'** को गिरवी रख दिया है बल्कि अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों– विश्व बैंक, आई.एम.एफ., ए.डी.बी. आदि के कर्ज़ों का अपने आपको मोहताज बना लिया है। यह वित्तीय संस्थान अविकसित देशों, विकासशील देशों के विकास के लिए कर्ज़े बांटकर हर साल हज़ारों करोड़ डालर का मुनाफा अर्जित कर रहे हैं। यह तथ्य भारतीय शासकों को पहले से ही ज्ञात थे फिर भी वे इस कर्ज आधारित व्यवस्था में ही अपना हित देख रहे हैं।

अतएव इन परिस्थितियों में हिमाचल के लोग नकाब में छिपे खूँखार तथा लालची चेहरों की असलियत जानने लगे हैं। सरकार से न्याय की तथा अधिकांश राजनीतिक दलों से जनहित में हस्तक्षेप की उम्मीद लोग छोड़ चुके हैं। राजनेताओं के दोनों धड़ों– **'सत्तासीन'** और **'सत्ता के इंतज़ार में बैठे'** से लोगों का मोहभंग हो चुका है। इन हालात में मुख्य मीडिया के प्रमुख हिस्से तथा अफसरशाही के प्रति लोगों में न तो विश्वास बचा है आरै न ही वे यह विश्वास कर पा रहे हैं कि कुछ बचे खुचे ईमानदार अफसर–राजनेता कुछ कर पाने की स्थिति में हैं। तब एक ही रास्ता बचता है और वह यह कि लोगों को जागरूक करना, संगठित करना, संघर्ष के रास्ते पर आगे बढ़ना और सभी संघर्षों को एकजुट संघर्ष के रूप में व्यापकता देना। आज हिमाचल के लोग भी अन्य राज्यों– उड़ीसा, छत्तीसगढ़, झारखंड आदि के लोगों की तरह अपने

जल, जंगल, ज़मीन, जीविका तथा अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष कर रहे हैं। वे यह जानते हैं कि **एक स्पष्ट, कारगर तथा सुनियोजित रणनीति के तहत चलने वाले जनसंघर्ष कभी असफल नहीं होते हैं। यही समझ इन जनसंघर्षों की उत्प्रेरक शक्ति है तथा अपने सामूहिक अस्तित्व की रक्षा इसका मुख्य सरोकार।**

एक बात समझ में नहीं आती कि **'ग्लोबल वार्मिंग', 'पर्यावरण रक्षा', 'वन्य जीव संरक्षण', 'राष्ट्रीय नदी'** आदि पर चिल्ल पों करने वाली सरकार कम्पनियों को इन सारे मामलों में खुली छूट क्यों दे रही है? कहीं ऐसा तो नहीं कि यह व्यवस्था अपने विनाश से भी मुनाफा कमाने की सुनियोजित साजिश के तहत तेजी के साथ काम कर रही है। कहीं यह व्यवस्था कफन से भी मुनाफा कमाने की दिशा में बहुत तेजी से तो नहीं बढ़ रही है? या 'समरथ को नहीं दोस गोसाईं' को चरितार्थ करने में यह सत्ता आमादा तो नहीं हो चुकी है?

प्रकृति के साथ **'ज़रूरत आधारित रिश्ते'** की बजाय **'मुनाफा आधरित रिश्ते'** कायम करने के भयावह दुष्परिणामों को अपनी आँखों से देखते, समझते और भुगतते लोग आज स्वतः प्रेरित होकर विभिन्न जनसंघर्षों के भागीदार बनने को बाध्य हैं। इसीलिए जनसंघर्षों में शामिल लोगों की कतारें तमाम लालच, दमन–उत्पीड़न के बावजूद भी लंबी होती जा रही है। यह लंबी होती कतारें जनसंघर्षों के अगुआकारों के लिए प्रेरक तथा प्राणदायक संजीवनी है।

हिमाचल प्रदेश की लगभग 80 प्रतिशत आबादी बागवानी, खेती, वन उपज, पशुपालन, दस्तकारी, लघु–उद्योगों से ही अपना जीवन–यापन कर रही है जबकि 3 प्रतिशत के लगभग सरकारी नौकरी, 2 प्रतिशत निजी कंपनियों में मजदूरी करके तथा आबादी का कुछ हिस्सा दुकानदारी व छोटे–छोटे कारोबार करके अपना जीवन–यापन कर रहा है।

प्रदेश की कुल आबादी के 25 प्रतिशत दलित समुदाय में से 5 प्रतिशत सरकारी नौकरी व 95 प्रतिशत खेती व दस्तकारी करके अपना जीवन निर्वाह कर रहे हैं।

इस 80 प्रतिशत आबादी के पास प्राकृतिक संसाधनों पर सदियों से पुराने वतनदारी व मलकियती अधिकार हैं। आज सरकारें जनता को इन के परंपरागत अधिकारों से बेदखल करके कंपनियों को बेच रही हैं। हिमाचल प्रदेश में पिछले कुछ सालों से विकास का जो मॉडल सरकारों ने अपनाया है, उसके परिणाम स्वरूप प्रदेश के आम निवासी आजीविका का नुकसान, विस्थापन व पर्यावरण असंतुलन का दंश झेल रहे हैं तथा प्राकृतिक संसाधनों पर अपना नियंत्रण खोते जा रहे हैं। सरकारें आज देशी या विदेशी बड़े पूंजी निवेशकों को सभी तरह की सुविधायें देकर प्रदेश के प्राकृतिक संसाधनों को उनके हवाले करने में लगी हैं। आज लाखों बीघा कृषि भूमि, वन भूमि, नदी, नाले, पत्थर इत्यादि कौड़ियों के भाव में इन निवेशकों को बेचे जा रहे हैं। अपने इस तरह के जन विरोधी, प्रकृति विरोधी तथा संविधान विरोधी कुकृत्यों हेतु सरकार इस हदतक आमादा है कि इस तरह के कार्यों का विरोध करने वालों पर गोलियां चलाने से भी वह नहीं हिचक रही है। वांगतु की पुलिस फायरिंग का उदाहरण प्रदेश वासियों के सामने है।

प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्र में लगभग 10.5 प्रतिशत भूमि ही खेती के लिए बची है फिर भी वहां पर जंगल की भूमि के साथ खेती की बेशकीमती भूमि, भूमि अधिग्रहण अधिनियम की आपातकालीन धारायें लगा कर इन योजनाओं के लिए अधिग्रहीत की जा रही है तथा कानूनी खानापूर्ति के लिए इसे जनहित में घोषित किया जा रहा है। भाखड़ा बांध के बाद तमाम दूसरे छोटे–बड़े बांधों से विस्थापित होने वालों को जमीन के बदले जमीन देने का प्रश्न ही सरकारों ने खत्म कर दिया है। दूसरी तरफ विशेष आर्थिक जोन (सेज) के लिए 1000–1000 हेक्टेयर जमीनें विशेष छूट वाली दरों पर उपलब्ध करायी जा रही हैं। परिणाम स्वरूप अकुशल मजदूरी या पलायन ही परियोजना प्रभावितों के हिस्से में आता है। परियोजना वाले कहते हैं

कि वह लोगों को नौकरियां देंगे। गांव, खेत, खलिहान के बदले एक–एक नौकरी ! कितनी नौकरियां मिलीं? विकास के नाम पर उपजाऊ जमीन को सीमेंट–कंक्रीट के जंगलों में तब्दील किया जा रहा है। सड़कों के चौड़ीकरण का मामला सीधे बांध परियोजनाओं और पर्यटन से जुड़ा है। इससे भी जंगलों एवं कृषि भूमि का विनाश हुआ है। लाखों पेड़ों का कटना पर्यावरण की अपूरणीय क्षति है। जल विद्युत परियोजनाओं से बाढ़ें, भूस्खलन, बंद रास्ते, सूखते जल स्रोत, कांपती धरती, कम होती खेती की जमीन, ट्रांसमीशन लाइनों के खतरे, कम होता कृषि उत्पादन, लाखों लोगों का विस्थापन यह वे उपहार हैं जो अभी तक बनी जल विद्युत परियोजनाओं एवं अन्य तथाकथित विकास परियोजनाओं से मिले हैं और आगे भी मिलेंगे। इन सबके बावजूद बिना कोई सबक सीखे बांध पर बांध बनाने की बदहवास दौड़ जारी है, क्योंकि इन परियोजनाओं के एजेण्डे में मुनाफा और महज मुनाफा है।

हिमाचल प्रदेश में लगभग 300 से अधिक स्थल विभिन्न परियोजनाओं के लिए चिन्हित कर लिये गये हैं और दर्जनों पर काम शुरू हो गया है। एक ही नदी को 100–150 किलोमीटर के अंदर बार–बार बांधा जा रहा है, सुरंगों से निकाला जा रहा है। नदी के नैसर्गिक प्रवाह के साथ बार–बार छेड़छाड़ की जा रही है। इसके पीछे एक मात्र मानसिकता है जल विद्युत उत्पादन से ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमाना।

हिमाचल में चल रही योजनायें :–

हिमाचल में चल रही, निर्माणाधीन, प्रस्तावित परियोजनाओं की स्थिति को समझने के लिए केवल किन्नौर जिले का उदाहरण ही पर्याप्त है। राज्य के अकेले किन्नौर जिले में ही एक के बाद एक लगातार दो दर्जन निर्माणाधीन एवं प्रस्तावित जल विद्युत परियोजनाओं के कारण इस क्षेत्र का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है।

यदि किन्नौर जिले की ही स्थिति को देखें तो काफी सीमा तक इन भयावह स्थितियों का आकलन सहजता से किया जा सकता है।

किन्नौर में स्थित सतलुज नदी पर कार्यरत जल विद्युत परियोजनाएं –

- नाथपा–झाखडी 1500 मेगावाट
- संजय परियोजना 120 मेगावाट
- बास्पा II 300 मेगावाट
- रूपती 1.5 मेगावाट

किन्नौर में सतलुल नदी पर निर्माणाधीन जल विद्युत परियोजनाएं–

- करछम–वांगतु 1000 मेगावाट
- काशंग I 66 मेगावाट
- शोरांग 100 मेगावाट
- टिडोंग 100 मेगावाट

किन्नौर में सतलुज नदी पर शुरू होने वाली परियोजनाएं–

- चांगो–यंगथंग 140 मेगावाट
- यंगथंग–खाब 261 मेगावाट
- खाब–श्यासो 1020 मेगावाट
- जंगी–ठोपन 480 मेगावाट
- ठोपन–पवारी 480 मेगावाट
- शौगठोंग–करछम 402 मेगावाट
- टिडांग II 60 मेगावाट

इसके अतिरिक्त सतलुज (किन्नौर जिले में ही) नदी पर प्रस्तावित जल विद्युत परियोजनाएं–

- श्यासो–स्पिलो 500 मेगावाट
- काशंग II 48 मेगावाट
- काशंग III 130 मेगावाट
- बास्पा I 128 मेगावाट
- रोपा 60 मेगावाट

इस परियोजनाओं के कारण अकेले किन्नौर में सतलुज व बास्पा नदी पूर्णरूप से भूमिगत हो जाएगी। क्योंकि यह परियोजनाएं **'रन ऑफ दि रिवर' है जिसका अर्थ होता है कि नदी के पानी को पहले डैम में रोका जाता है फिर भूमिगत सुरंगों द्वारा भूमिगत टरबाइनों तक पहुंचाया जाता है और फिर पानी को नदी में छोड़ा जाता है।**

इसका परिणाम यह होगा कि भूमिगत सुरंगों के ऊपर स्थित सम्पूर्ण क्षेत्र नीचे से खोखला और अन्ततः जर्जर हो जाएगा। इसके अतिरिक्त चूँकि यह क्षेत्र भूकंपीय मानचित्र के जोन 4 व 5 में स्थित है। अतएव इस क्षेत्र के ऊपर भूकंप के खतरे नंगी तलवार की तरह हमेशा लटके रहेंगे।

करछम–वांगतुः

करछम–वांगतु 1000 मेगावाट का 'रन ऑफ दि रिवर' हाइड्रो इलेक्ट्रिक प्रोजेक्ट है। यह प्रोजेक्ट जेपी करछम हाइड्रो कारपोरेशन लिमिटेड द्वारा बनाया जा रहा है। यह प्रोजेक्ट करछम व वांगतु गांवों के बीच में लगाया जा रहा है। इसके लिए 98 मीटर ऊँचे डैम का निर्माण किया जायेगा तथा 17.2 किलोमीटर लम्बी एवं 10.8 मीटर चौड़े व्यास वाले टनल का निर्माण किया जायेगा। इस टनल के निर्माण से 68 लाख टन से भी ज्यादा मलबा बाहर निकलेगा। नवम्बर 2005 में इस प्रोजेक्ट पर कार्य शुरू हुआ था। 2009 तक इस प्रोजेक्ट का कार्य पूरा कर लेना था परंतु लगातार लोगों के विरोध प्रदर्शनों के कारण यह पूरा नहीं

किया जा सका है। अब इसे 2011 तक पूरा कर लेने की बात कही जा रही है।

खाब–श्यासोः

यह प्रोजेक्ट खाब व श्यासो गांवों के बीच में सतलुज नदी पर प्रस्तावित है। डैम का निर्माण खाब गांव में स्पीती व सतलुज पर किया जायेगा। यह प्रोजेक्ट भारत सरकार एवं हिमाचल प्रदेश के संयुक्त उपक्रम सतलुज जल विद्युत निगम द्वारा बनाया जायेगा। **1020 मेगावाट के इस प्रोजेक्ट के लिए 275 मीटर ऊँचा डैम बनाया जायेगा जो विश्व का दूसरा सबसे ऊँचा डैम होगा।** इससे पहले स्विटजरलैंड में 285 मीटर ऊँचा डैम बनाया गया था।

बास्पा–I

इस प्रस्तावित प्रोजेक्ट के लिए 180 मीटर ऊँचे डैम का निर्माण किया जायेगा जिसमें 10 लाख पेड़ डूब जायेंगे तथा 'करछम वर्ल्डलाइफ सेंच्युरी' भी प्रभावित होगी।

बास्पा–II

बास्पा–II 300 मेगावाट प्रोजेक्ट कुपा गांव, बास्पा नदी के पास स्थित है तथा इसके लिए करछम में पावर हाउस का निर्माण किया जायेगा। जेपी हाइड्रो पॉवर लिमिटेड ने 2004 में इस परियोजना पर काम शुरू किया था।

प्रभाव एवं चुनौतियां:

प्रदेश के लोगों के सामने आज अपने सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक अस्तित्व को बचाने का संकट पैदा होता जा रहा है। बड़े बांध, जल विद्युत परियोजनाएं, बड़ा निर्माण, खनन व प्रदूषण फैलाने वाले बड़े उद्योग प्रदेश के वातावरण के लिए घातक हैं तथा यहां की भौगोलिक व प्राकृतिक बनावट, जो शिखर ढलान तथा कमजोर चट्टानों से बनी है उसके लिए हर तरह से खतरनाक हैं। हिमाचल प्रदेश भूकंप संवेदी जोन 4 व 5 में स्थित है। सन् 1975 में किन्नौर जिले में 6.8 रिक्टर स्केल का भूकंप भी आ चुका है जिसमें भारी जान–माल की हानि हुई थी। अतः जहां एक ओर भविष्य में बड़ी प्राकृतिक आपदाओं की संभावना बढ़ गयी है, वहीं दूसरी तरफ कंपनियों द्वारा मुनाफे की लालच में प्रकृति के साथ की जा रही छेड़छाड़ भी लगातार बढ़ती जा रही है। ये तमाम परियोजनाएं जंगलों का बड़े पैमाने पर विनाश कर रही हैं।

हिमाचल प्रदेश में लगभग 300 जल विद्युत परियोजनायें प्रस्तावित हैं। इन परियोजनाओं को **'रन ऑफ द रिवर'** कहा जा रहा है। मगर वास्तव में बांध और तटबंधों द्वारा नदियों को एक के बाद एक सुरंगों में डाला जा रहा है। समूची घाटियों का पानी अब नदियों में नहीं, बल्कि सुरंगों में बहेगा और बीच–बीच में यदि वह कहीं सतह पर दिखाई भी देगा तो ऊर्जा उत्पादन के लिए।

प्रदेश में सतलुज, ब्यास, चन्द्रा नदी, पब्बर नदी तथा बास्पा जल संग्रहण क्षेत्र में बन रही सभी जल विद्युत परियोजनाएं 'रन ऑफ दि रिवर' परियोजनाएं हैं। इन परियोजनाओं के निर्माण से यहां के पर्यावरण पर अनेक प्रकार के दुष्परिणाम पड़ रहे हैं–

जलाशय के प्रभावः

इन परियोजनाओं में नदी पर बांध बनाकर जलाशयों का निर्माण किया जाता है जिसे डैम कहा जाता है। इस डैम के पानी से आस–पास की जलवायु में परिवर्तन आता है जैसे– कि एक बड़े भू–भाग का पानी में डूब जाना, उस क्षेत्र में पाये जाने वाले पेड़–पौधे व वनस्पति का नष्ट होना, पानी के जमा होने के कारण मच्छर, कीड़े–मकोड़े आदि पैदा होना, अनेक प्रकार की बीमारियों का फैलना, मीथेन जैसी गैसों का उत्सर्जन होना तथा धुंध के कारण उस क्षेत्र की विजिबिलिटी कम होना आदि। जलाशयों के पानी से हाइड्रोस्टैटिक दबाव का निर्माण होता है जिससे उस क्षेत्र में भूकंप आ सकते हैं और आस–पास के क्षेत्र में भू–स्खलन हो सकता है जिससे निकटवर्ती गांवों को नुकसान हो सकता है।

भूमिगत सुरंगों के प्रभावः

भूमिगत सुरंग के निर्माण में भारी मात्रा में विस्फोटक के प्रयोग से यह क्षेत्र जर्जर हो जाएगा और इस क्षेत्र में स्थित गांव बुरी तरह क्षतिग्रस्त होंगे। जैसे कि किन्नौर जिले के चगांव, उरनी, युला, मीरू, चोलिंग व रूनांग गांव करछम–वांगतु परियोजना में हुए ब्लास्टिंग से बुरी तरह से प्रभावित हुए हैं। इसके अतिरिक्त ब्लास्टिंग से उत्पन्न जहरीली गैस, गाड़ियों और अन्य मशीनरियों से उत्पन्न गैसों व धूल इत्यादि से वायु प्रदूषित हो गयी है। धूल–कण, मिट्टी व धुंध वायु मण्डल में फैल रहे हैं जिससे सेब व अन्य कृषि, बागवानी फसलों का उत्पादन बुरी तरह प्रभावित हो रहा है।

वायु प्रदुषणः

प्रदेश की जल विद्युत परियोजनाओं के निर्माण कार्य में भारी संख्या में बुल्डोजरों, डम्पर, मशीनरी, गाड़ियों का प्रयोग किया जा रहा है। इसके अलावा प्रोजेक्ट एरिया में कई बड़े क्रेशर प्लांट लगाये जा रहे हैं। सुरंगों के निर्माण में ब्लास्टिंग के लिए विस्फोटक पदार्थों का उपयोग किया जा रहा है। इससे भारी मात्रा में कार्बन मोनो

ऑक्साइड, कार्बन–डाइऑक्साइड, क्लोरोफलोरो कार्बन, मेथैन, सल्फर–डाईआक्साइड आदि गैसों का उत्सर्जन होगा जिससे वायु प्रदूषण होगा।

मानव स्वास्थ्य पर प्रभावः

कार्बन मोनोऑक्साइड की मात्रा बढ़ जाने से श्वाँस संबंधी रोगों के साथ त्वचा कैंसर की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। सल्फर डाइ–ऑक्साइड के कारण कान, आंख तथा फेंफड़े की बीमारियां पैदा होने लग जाती हैं। नाइट्रिक ऑक्साइड गैस बढ़ने से श्वाँस संबंधी बीमारी होती है और निमोनिया जैसी बीमारी आम होने लगती है।

2007 में हिमाचल प्रदेश व उत्तराखण्ड की सरकारों ने दोनों प्रदेशों में जल विद्युत परियोजनाओं के रिव्यू के लिए 'हाइड्रो तस्मानिया' को नियुक्त किया। हालांकि न्यूजीलैंण्ड के इस प्रतिष्ठान को हिमालय की पारिस्थितिकी की कोई जानकारी नहीं थी, फिर भी इसने अनुमान लगाया कि इन परियोजनाओं को तीन तरह की चुनौतियों– भूगर्भीय (भूकंप आदि), हाइड्रोलॉजिकल (बहाव, बाढ़ आदि) तथा मलवे का भार (जिसके कारण प्रदेश की 1,500 मैगावाट की 'रन ऑफ दि रिवर' नाथपा–झाखड़ी परियोजना को बरसात के दौरान बन्द कर देना पड़ा था) का सामना करना पड़ेगा।

'हाइड्रो तस्मानिया' ने तो यह भी कहा था कि जल विद्युत परियोजनायें बनाने वाली अधिकांश निजी कपनियां न सिर्फ हिमाचल प्रदेश से अपरिचित हैं, बल्कि उन्हें जल विद्युत परियोजनाओं का भी कोई अनुभव नहीं है।

सभी की सभी 300 जल विद्युत परियोजनाओं के आंकड़े सार्वजनिक रूप से उपलब्ध नहीं हैं। लेकिन प्रदेश की प्रमुख परियोजनाओं का पर्यावरणीय प्रभाव आकलन रिपोर्ट प्राप्त कर उनका स्वतंत्र विशेषज्ञों द्वारा विश्लेषण कर लिया गया है।

इन पर्यावरण प्रभाव आकलन रिपोर्टों में कुछ तथ्य एक जैसे है। पहला तो यही कि ये सब आवश्यक पर्यावरणीय

अनुमति पाने की दृष्टि से तैयार किये गये हैं। लेकिन आधे मामलों में परियोजनायें उस तरह नहीं बनाई जा रही हैं, जिस तरह वे शुरूआत में डिजाइन की गई थीं। उत्पादन क्षमता बढ़ा दी गई है और उसी के अनुरूप लागत, सुरंग की लंबाई, दीवारों की ऊँचाई और टरबाइनों की संख्या में बढ़ोतरी हुई है। परियोजनाओं में इन संशोधनों के बाद नयी पर्यावरणीय प्रभाव आकलन रिपोर्ट नहीं बनाई गई हैं।

किन्नौर में परियोजना निर्माण में संवैधानिक व वैधानिक प्रावधानों को ताक पर रखकर निर्माण कार्य धड़ल्ले से किया जा रहा है और जनता द्वारा विरोध किये जाने पर पुलिस बल का प्रयोग कर संघर्ष को दबाया जा रहा है। आज सरकार कॉरपोरेट जगत के दबाव में आकर लोगों के मौलिक, राजनैतिक, सामाजिक व आर्थिक अधिकारों के संरक्षण व सम्मान करने के दायित्व का त्याग कर चुकी है। ग्राम सभाओं के विरोध के बावजूद सरकार ने बघेरी (नालागढ़) में 1650 बीघा वन भूमि 1 रु. प्रति बीघा वार्षिक लीज रेंट पर जे. पी. कंपनी को हस्तांतरित कर दी है। हैरत की बात यह है कि जे.पी.कंपनी को उक्त वन भूमि की लीज वर्ष 2008 में मंजूर की जाती है जबकि जे.पी. कपंनी ने परियोजना का निर्माण कार्य वर्ष 2006 से ही शुरू कर दिया था।

सारे बांध सेंट्रल थ्रस्ट के निकट भूकंपीय जोन चार और पांच में पड़ते हैं, जहां कठोर क्वार्टजाइट और ग्रेनाइट की चट्टानों में भी दरारें पड़ी हैं। 2 से 38 किमी लम्बी ये सुरंगें भूगर्भीय दृष्टि से सक्रिय क्षेत्रों से होकर गुजरती हैं। **वैकल्पिक निर्माण स्थलों के बारे में चिन्तन ही नहीं किया गया है। न जलाशय निर्मित भूकंपों की आशंका का जिक्र किया गया है और न ही मौजूदा और संभावित भूगर्भीय क्षति का उल्लेख किया गया है।** सुरंगों की खुदाई तथा अन्य निर्माण से बहुत सारा मलवा पैदा होगा लेकिन कहीं भी यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि इसका क्या किया जायेगा? एकाध जगह जिक्र है कि मलबे से भरे स्थानों को उपजाऊ मिट्टी से भरा जायेगा

लेकिन उपजाऊ मिट्टी का स्रोत नहीं बताया गया है। निर्माण स्थलों पर भारी मात्रा में सीमेंट, रेता, बोल्डर, लोहा, मशीनरी, विस्फोटक आदि पहुंचाने के लिए संपर्क मार्ग बनाये जायेंगे, कटान–खदान होगा, विस्फोटकों का प्रयोग किया जायेगा और ढेर सारी धूल उड़ेगी। इस सबका कोई जिक्र इन रिपोर्टों में नहीं है।

अधिकांश स्थानों पर बालुई मिट्टी होने के कारण यहां पर सेडीकेंटेशन की दर बहुत अधिक है। इसकी कोई व्यवस्था नहीं है और इस बात का भय है कि यह नदियों में ही फेंका जायेगा और मानसून के समय पानी के साथ बह जायेगा। नदियों के पानी को सुरंगों में बहाने से चूहलों व घराटों पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा। पानी को सुरंगों में बहने से उसे रोशनी और ताजी हवा नहीं मिलेगी और इससे उसकी गुणवत्ता प्रभावित होगी। ऐसे मुद्दों के पर्यावरणीय प्रभाव का रिपोर्टों में कहीं कोई जिक्र नहीं है। यह अवश्य कहा गया है कि **नदियों में 15 प्रतिशत पानी का बहाव सुनिश्चित किया जायेगा लेकिन लोगों की जरूरत के हिसाब से कितना पानी पर्याप्त होगा और क्या इस बहाव को नदी में छोड़े जाने के बाद कम पानी के वक्त टरबाइनों को चलाने के लिए पानी पर्याप्त होगा, इस बारे में बातचीत नहीं की गई है।** बाढ़ आने की फ्रीक्वेंसी, अधिकतम बढ़ा हुआ पानी आदि हाइड्रोलिक आंकड़ों के बारे में पर्यावरणीय प्रभाव रिपोर्ट पूरी तरह चुप है। प्रभावित होने वाले वनस्पति और प्राणिजगत, काटे जाने वाले पेड़ों की संख्या की सूची नहीं दी गई है। कहीं औषधीय महत्व वाली प्रजातियों का जिक्र है तो क्षतिपूर्ति हेतु किये जाने वाले प्रस्तावित वृक्षारोपण में उनके लिये कोई योजना नहीं है। कुल कितने मजदूर काम करेंगे, उनमें कितने स्थानीय होंगे, उनके आवास और साफ–सफाई की क्या व्यवस्था होगी? इस बारे में कुछ नहीं बताया गया है। बस एकाध जगह सोकपिट और शौचालयों की बात की गई है। स्थानीय समाज का आर्थिक–सामाजिक स्थितियों का विवरण नहीं है और मौजूदा भू–उपयोग की बात की गई है, विशेषकर संभावित डूब और विस्थापन के इलाकों की।

परियोजनाओं द्वारा स्वास्थ्य पर होने वाले प्रभाव तथा ईंधन और चारे के नुकसान का भी अध्ययन नहीं किया गया है।

ऐसी तमाम कमियों के बावजूद कंपनियों को उदारतापूर्वक करों में रियायतें दी गई हैं। उनके लिये बहुत कम निवेश पर भारी मुनाफे की व्यवस्था की गई है।

प्रदेश के अधिकांश नदी–नालों पर छोटे–बड़े, बांध बनाने की तैयारी है। देशी–विदेशी कंपनियों को परियोजनायें लगाने का न्यौता दिया जा रहा है। **निजी कंपनियों के आने से लोगों का सरकार पर दबाव कम हो जाता है, लेकिन कंपनी का लोगों पर दबाव बढ़ जाता है। दूसरी तरफ कंपनी के पक्ष में स्थानीय प्रशासन व सत्ता भी खड़ी हो जाती हैं।** साम, दाम, दंड, भेद, झूठे आंकड़े व अधूरी भ्रामक जानकारियों वाली पर्यावरण प्रभाव आकलन रिपोर्ट, जनता को उसकी जानकारी भी नहीं मिलना......ऐसी परियोजनाओं में ऐसा ही किया जा रहा है।

आज जल विद्युत परियोजनाओं से कई नकारात्मक बातें सामने आने लगी हैं। पहली बात यह कि पहाड़ों से निकलने वाली नदियों के द्वारा बड़े पैमाने पर निकलने वाली तलछट आगे मैदानी इलाकों के लिए वरदान होती थी। इस तलछट से नदी के किनारे की बहुमूल्य मिट्टी का क्षरण होने से बचता था। समुद्र से होने वाले भूक्षरण से रक्षा होती थी। परंतु नदियों पर डैम बनने तथा उन्हें सुरंगों से गुजारने के कारण यह गाद (सिल्ट) के रूप में जलाशयों में एकत्रित होती रहती है। भाखड़ा बांध इसका सटीक उदाहरण है, जो गाद से एकदम पट चुका है तथा उसको निकालने की कोई कारगर तकनीक प्रभावी नहीं की जा सकी है।

कैग ने भी अपनी रिपोर्ट में कहा है कि भाखड़ा बांध में कैचमेंट एरिया ट्रीटमेंट के कोई प्रमाण नहीं मिले हैं। एकत्र होनेवाली तलछट (गाद) को निकालना काफी खर्चीला और मुश्किल है। नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित **किताब 'अवर इनवायरमेंट'** के मुताबिक पिछले 50 सालों में सरकार ने बड़ी संख्या में जल विद्युत परियोजनायें

लगायी हैं। कागजों पर ये परियोजनाएं विकास का अच्छा तरीका दिखती हैं। परंतु प्रकृति के साथ इतने बड़े पैमाने पर छेड़छाड़ के कई नुकसान होते हैं, जिनका पूर्वानुमान लगाना संभव नहीं है। एल. फतेह अली द्वारा लिखित किताब के अनुसार एक दुखद सच्चाई यह है कि **''हमारे देश में बने 9.2 प्रतिशत बांधों में दरार पड़ चुकी है, जो दुनिया के औसत के दुगने से भी ज्यादा है। हमारे देश में 435 बांधों में से 13 एकदम नाकामयाब रहे हैं।''** ऊर्जा उत्पादन के जिस भी माध्यम से यदि कार्बन उत्सर्जन होता है तो यह प्रदूषण पर्यावरण व ग्लोबल वार्मिंग के लिए जिम्मेदार होता है। थर्मल पावर प्लांटस इस दृष्टि से बदनाम भी हैं। दिलचस्प बात यह है कि जल विद्युत के माध्यम से ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन थर्मल पावर प्लान्ट्स की तुलना में ज्यादा होता है। एक यूनिट बिजली बनाने के लिए जहां थर्मल प्लान्ट्स से 800 ग्राम कार्बन उत्सर्जन होता है वहीं जल विद्युत के लिए बने बड़े–बड़े बांधों के कारण 2145 ग्राम का कार्बन उत्सर्जन होता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि हमारे देश की जलवायु ट्रोपिकल है और ऐसे देशों में बड़े बांधों से ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन अधिक होता है।

बांधों के कारण बड़े क्षेत्र डूब में आएंगे, जंगल नष्ट होंगे, भूकंप की संभावना बढ़ेगी, भूस्खलन होगा, जैव विविधता का नाश, जल की गुणवत्ता में कमी आदि जो होगा उसकी क्षति पूर्ति असंभव होगी।

आज किन्नौर जैसे जनजातीय जिले की स्थिति भयावह है क्योंकि किन्नौर में सतलुज की लम्बाई 100–150 किलोमीटर है। सतलुज के इस 100–150 किलोमीटर पर लगभग 2000 मेगावाट की जल विद्युत परियोजनाएं शुरू की जा चुकी हैं, 2843 मेगावाट की हाइड्रो पावर प्रोजेकट की जल विद्युत परियोजनाएं शुरू होने वाली हैं, 1260 मेगावाट की हाइड्रो पावर जल विद्युत की परियोजनाओं पर काम चल रहा है तथा 866 मेगावाट की परियोजनाएं प्रस्तावित हैं।

किन्नौर जिला सतलुज नदी के दोनों किनारों की तीव्र ढलानों पर स्थित है। यह हिमाचल के उत्तर–पूर्व में स्थित चट्टानी व तीव्र

ढलान वाला क्षेत्र है। किन्नौर का कुल क्षेत्रफल 6401 वर्ग किलोमीटर है। इस क्षेत्र के गांवों की ऊँचाई समुद्रतल से 7000 से 12000 फुट तक है। वांगतु से ऊपर वर्षा बहुत कम होती है। मानसून की हवाएं यहां तक नहीं पहुंच पाती हैं। वर्षा न होने के कारण यहां पर वानस्पतिक आवरण न के बराबर है, केवल नंगी पहाड़ी ढलान ही देखी जा सकती हैं इसलिए वांगतु से ऊपर के क्षेत्र को शीत मरूस्थल कहा जाता है। पहाड़ी मरूस्थल कितना नाजुक होता है इस का अंदाजा यहां के हर कदम पर भूस्खलन बिंदुओं से लगाया जा सकता है। जहां एक ओर किन्नौर का समूचा क्षेत्र पहले से ही अत्यंत संवेदनशील है वहीं दूसरी ओर आज के तथाकथित विकास से किन्नौर के सामने अनेक प्रकार की मानव प्रायोजित समस्याएं खड़ी हो गई हैं, जिनके मूल में कभी पूरा न होने वाली मुनाफाखोरी की भूख है।

अचानक बाढ़ः

किन्नौर में सतलुज जल संग्रहण क्षेत्र में कभी–कभी भारी वर्षा या बादल फटने की घटना घटित होती है तो सतलुज नदी में प्रलयंकारी बाढ़ आ जाती है जिससे घाटी में तबाही मच जाती है। इस तरह की प्रलयंकारी बाढ़ से डैम के टूट जाने से बाढ़ की स्थिति और भी भयानक हो सकती है। सन् 2000 व 2005 में सतलुज नदी में आई अचानक बाढ़ तथा 2005 में ही बास्पा नदी में आयी बाढ़ से नाथपा–झाखड़ी 1500 मेगावाट एवं बास्पा प्प 300 मेगावाट परियोजनाएं बुरी तरह से प्रभावित हो चुकी हैं। बास्पा नदी में आयी बाढ़ से डैम के सभी गेट खोल दिये गये जिसके कारण मैदानी भाग में भारी तबाही हुई थी।

सन् 1988 में तिरूंग खंड, 1993 में पूनंग खंड और 1997 में पानवी खंड में अचानक बाढ़ आने से सतलुज घाटी में भारी तबाही मच चुकी है लेकिन इससे सबक लिए बिना ही नाथपा–झाखड़ी व बास्पा जैसी वृहत परियोजनाओं को स्वीकृति दे दी गयी जिसका लोगों को सन् 2005 में खामियाजा भुगतना पड़ा।

तलछट (गाद) की समस्याः

बाढ़ की त्रासदी के अतिरिक्त प्रदेश की जल विद्युत परियोजनाओं को एक अन्य गंभीर समस्या से जूझना पड़ रहा है। वह है तलछट (गाद), नदी के साथ तलछट बह कर जलाशयों में एकत्रित हो रही है। जिसे निकालना काफी खर्चीला व मुश्किल कार्य होता है। इस समस्या के चलते बहुत बार नाथपा–झाखड़ी परियोजना को बंद करना पड़ा है।

संघीय ढांचे पर प्रश्न चिन्ह :

हिमाचल प्रदेश में जल विद्युत परियोजनाओं की शुरूआत अंग्रेजों ने 1935 में ही कर दी थी। प्रदेश की धरती पर पहली परियोजना उहल नदी पर **'शानन जल विद्युत परियोजना'** के नाम से जोगिन्दर नगर में बनी लेकिन **स्वामित्व का अधिकार आज तक पंजाब सरकार के पास है।** आज स्थिति यह है कि यहां की रखवाली पंजाब की पुलिस करती है और इस इलाके में पंजाब का कानून लागू होता है जबकि यह हिमाचल का हिस्सा है।

इसके बाद स्वतंत्र भारत में भाखड़ा–व्यास प्रबंध बोर्ड की दो परियोजनाएं भाखड़ा बांध और पौंग बांध बना तथा रावी नदी पर थीन बांध बनाया गया। इन सभी परियोजनाओं में प्रदेश की हजारों हेक्टेयर उपजाऊ भूमि डुबी तथा लाखों लोग विस्थापित हुए। इन सब परियोजनाओं की मालिक भी पंजाब सरकार है। **इन परियोजनाओं के बदले हिमाचल प्रदेश को कुछ नहीं मिला।** दरअसल इन तमाम परियोजनाओं के लिए जो भी समझौते किये गये थे, वे पंजाब सरकार के साथ किए गए थे क्योंकि उस वक्त हिमाचल राज्य के रूप में अस्तित्व में नहीं आया था। हिमाचल प्रदेश बनने के बाद इन समझौतों में कोई बदलाव नहीं हुआ। हालांकि हिमाचल व अन्य राज्यों के हिस्से में पंजाब के बंटवारे के संदर्भ में **इंदिरा अवार्ड तथा राजीव लोंगोवाल समझौते भी हुए। इन समझौतों में हिमाचल प्रदेश को चंडीगढ़ में 9 प्रतिशत हिस्सा, शानन, भाखड़ा व व्यास परियोजनाएं जो हिमाचल की भूमि पर बनी है इन्हें हिमाचल को लौटाने की बात हुई, परंतु आज तक उक्त समझौते अमल में नहीं आए।**

ऊर्जा की वर्तमान स्थिति :

ऊर्जा उत्पादन की मौजूदा स्थिति देखने से पता चलता है कि थर्मल पावर कुल ऊर्जा उत्पादन में 64.6 प्रतिशत का योगदान देता है, जल विद्युत 24.6 प्रतिशत, परमाणु ऊर्जा 2.9 प्रतिशत और पवन ऊर्जा का 1 प्रतिशत योगदान रहता है। देश में उत्पादित कुल ऊर्जा की मात्रा का लगभग 23 प्रतिशत वितरण में ही नष्ट हो जाता है। हालांकि वास्तविक क्षति इससे भी अधिक है। उत्पादित ऊर्जा का औसत टैरिफ मूल्य 2.12 प्रति किलोवाट है। भारत की केन्द्र सरकार सन् 2012 तक प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष 1000 किलोवाट ऊर्जा खपत के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु प्रतिवर्ष ऊर्जा विकास से संबंधित बजट में वृद्धि कर रही है। इस के लिए जहां 2006–07 में इसे बढ़ाकर 800 करोड़ रुपये आबंटित किए थे, वहीं 2007–08 में 650 करोड़ रुपये कर दिया गया हैं सरकार अल्ट्रा मेगा पावर प्रोजेक्ट पर काम करने के लिए प्रतिबद्ध है और इस कारण 20000 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया हैं इससे 4000 मेगावाट अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है।

इस तरह के राक्षसी लक्ष्य हासिल करने के लिए जाहिर है कि परमाणु समझौते होंगे, बड़े–बड़े झीलनुमा बांध बनेंगे। इस प्रक्रिया में हम सिर्फ देश के लिए ऊर्जा उत्पादन ही करते रह जाएंगे, चाहे पर्यावरण की बलि ही क्यों न देनी पड़े। भारत अमेरिका के साथ परमाणु समझौता कर चुका है। न्यूक्लियर ऊर्जा को गैर कार्बन उत्सर्जक मानते हुए भारत आगे बढ़ रहा है। हमें स्मरण रखना होगा कि न्यूक्लियर ऊर्जा उत्पादन हेतु गुणवत्ता युक्त कच्चे माल की उपलब्धता पर हमेशा ही परावलम्बी रहेंगे। वर्तमान में भारत में 14 रियेक्टरों के माध्यम से 2550 मेगावाट ऊर्जा का उत्पादन हो रहा है तथा 9 अन्य रियेक्टर निर्माणाधीन हैं। इन निर्माणाधीन रियेक्टरों के द्वारा अतिरिक्त 4092 मेगावाट ऊर्जा का उत्पादन होगा।

लेकिन इसके लिए यह भी सोचना चाहिए कि न्यूक्लियर पावर प्लांट से रेडियोधर्मिता युक्त अपशिष्टों को ठिकाने लगाना भी भारत के लिए आगे निरन्तर एक जटिल प्रश्न बना ही रहेगा।

विकल्प मौजूद हैंः

भारत में जल विद्युत का उत्पादन कुल ऊर्जा उत्पादन का 25 प्रतिशत है। देश के उत्तर व उत्तर पूर्वी राज्यों (जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, पश्चिम बंगाल, सिक्किम और अरूणाचल प्रदेश) में जल विद्युत परियोजनाओं की हलचल काफी तेज है। आज उत्तराखण्ड में 200 जल विद्युत परियोजनाएं प्रस्तावित हैं वहीं हिमाचल प्रदेश में 300 छोटी–बड़ी जल विद्युत परियोजनाएं प्रस्तावित की जा चुकी हैं। इसे भारत सरकार की उस योजना से जोड़कर देखना चाहिए जिसके तहत हिमाचल तथा उत्तराखण्ड को **'पावर जोन'** के रूप में विकसित करना प्रस्तावित है तथा उड़ीसा, छत्तीसगढ़, झारखण्ड **'मिनरल जोन'** के रूप में प्रस्तावित हैं। वहीं यह भी समझना होगा कि क्यों एकाएक उत्तराखण्ड, झारखण्ड तथा छत्तीसगढ़ राज्य अस्तित्व में आ गये। इस राजनैतिक अर्थशास्त्र और पहचान की राजनीति की असलियत भी जान– समझ कर हमें इसके अन्तःसम्बन्धों को भी समझना होगा।

दो दशक पूर्व सिर्फ कुछ ही जल विद्युत परियोजनाएं थीं। आज तो पहाड़ों से निकलने वाली हर छोटी–बड़ी नदी के प्रवाह से ऊर्जा उत्पादन की योजनाएं उफान पर हैं। समाज में भी जल विद्युत के प्रति सहानुभूति है क्योंकि यह प्रचारित हो रहा है कि इसमें कार्बन उत्सर्जन की कोई समस्या नहीं है। 2007–08 में 14811.35 मेगावाट ऊर्जा का उत्पादन और 1002 करोड़ का लाभ अर्जित करके सरकारी उपक्रम एनएचपीसी अन्य ऊर्जा उत्पादन के उपक्रमों में सबसे आगे नजर आ रहा है।

पवन ऊर्जा को प्रदूषण रहित ऊर्जा स्रोत मानना न्याय संगत होगा। देश में 45000 मेगावाट की संभावना वाले इस क्षेत्र में पवन ऊर्जा का उत्पादन मात्र 1267 मेगावाट है जिसमें से 1210 मेगावाट

का उत्पादन व्यावसायिक प्रतिष्ठानों द्वारा किया जा रहा है। देश के 13 राज्यों में 192 ऐसे स्थान है जहां पवन ऊर्जा उत्पादन की अच्छी संभावनाएं हैं। **साथी गुमान सिंह बताते हैं कि आज 55 से 750 मेगावाट क्षमता के विंड इलेक्ट्रिक जनरेटर उपलब्ध हैं लेकिन सरकार का ध्यान इस ओर उतना नहीं है जितना कि थर्मल, न्यूक्लियर व जल विद्युत की बड़ी परियोजनाओं पर है; क्योंकि सरकारों को इनमें ज्यादा दलाली मिलती है एक बड़े बांध में लाखों टन सीमेंट, लोहा, स्टील तथा बड़ी–बड़ी मशीनें काम में आती हैं, जो अन्ततः चारों तरफ से बड़ी कम्पनियों का ही मुनाफा बढ़ाती हैं।**

आगे वे बताते हैं कि सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा की भांति ही अक्षय ऊर्जा का बेहतरीन स्रोत है लेकिन वर्तमान में सौर ऊर्जा का उत्पादन मात्र 62 मेगावाट के आस–पास ही हो रहा है। देश में वर्ष के औसतन 300 दिन प्रचुर सौर ऊर्जा उत्पादन हेतु पूरी शत–प्रतिशत क्षमता के साथ उपलब्ध हैं। **5000 ट्रिलियन प्रति घंटा ऊर्जा उत्पादन की संभावना इस क्षेत्र में है जो कि पूरे देश की ऊर्जा आवश्यकता से कहीं ज्यादा है।** देश में 70000 पीवी सिस्टम, 500 सोलर वाटर पम्पिंग सिस्टम, 509894 सोलर लालटेन, 256673 होम लाइटिंग सिस्टम व 478967 स्ट्रीट लाइट्स के माध्यम से सौर ऊर्जा का उपयोग किया जा रहा है।

बायोमास द्वारा ऊर्जा उत्पादन की दृष्टि से भारत विश्व में चौथे स्थान पर है और इस क्षेत्र में विश्व समुदाय का नेतृत्व करने की पूरी योग्यता देश में है। भारत में बायोमास से ऊर्जा उत्पादन की संभावना 16000 मेगावाट की है। वर्तमान में 630 मेगावाट उत्पादन की परियोजनाएं निर्माणाधीन हैं। एक मेगावाट क्षमता का बायोमास संयंत्र जो यदि वर्ष में 5000 घंटे चले तो उसे 6000 टन बायोमास की जरूरत होगी। बायोगैस से 300 किलोवाट ऊर्जा उत्पादन हेतु 100 मीट्रिक टन गोबर की आवश्यकता होती है। साथी गुमान सिंह गंभीर होते हुए बताते हैं कि **हमें ऐसी किसी भी ऊर्जा से बचना होगा जो कि विनाशकारी है। मानव जीवन व प्रकृति दोनों**

की रक्षा करना हमारा पहला धर्म है। हम अपनी भावी पीढ़ी को सुखी देखना चाहते हैं। यदि मानवता और पृथ्वी सलामत रही, तभी वर्तमान व भविष्य के ताने–बाने का कोई मतलब है। हम अपनी आवश्यक ऊर्जा जरूरतों को परमाणु, कोयला या बड़े–बड़े बांधों के द्वारा एकमुश्त पूरी करने के बजाय छोटे, प्रकृति पोषक टिकाऊ माध्यमों से ही प्राप्त करें तो अच्छा होगा अन्यथा पृथ्वी हमारे रहने लायक ही न बचेगी।

विस्थापन, पुनर्वास, मुआवजा, सरकार एवं मुनाफाखोरः

आजतक इन सभी परियोजनाओं से लाखों परिवार विस्थापित हो चुके हैं जिनका कहीं भी उचित पुनर्वास तक नहीं हुआ है। 1960 के दशक में भाखड़ा बांध व बी.एस.एल. से 14 हजार से अधिक परिवार विस्थापित हुए थे।

लाखों बीघा कृषि व वन भूमि डैम में डूब गई तथा हजारों बीघा भूमि बी.बी.एम.बी. ने अन्य कार्यों के लिए लोगों से जबरन अधिग्रहीत कर के बदले में **10 रु. से 50 रु. प्रति बीघा मुआवजा दिया।** हजारों किसान भूमिहीन हो गए। पुनर्वास व पुनर्स्थापना का कार्य आज तक ठीक से नहीं हो सका। 3 हजार के करीब परिवार हरियाणा, हिसार, फतेहाबाद, फैजाबाद तथा सिरसा भेज दिए गए जहां आज तक वे नहीं बस पाए। कुछ लोग देहरादून, रोपड, नालागढ़ तथा प्रदेश के अन्य हिस्सों में अपने आप बसने को मजबूर हो गए। 1970 के दशक में पौंग डैम से 18 हजार परिवार विस्थापित हुए। हजारों परिवारों को राजस्थान भेजा गया जहां से बहुत लोगों को वापिस भाग कर आना पड़ा तथा हजारों परिवार आज भी दर–दर भटक रहे हैं। इसके बावजूद आज सरकार रेणुका में बड़ा बांध बनाने की तैयारी में है जो दिल्ली की प्यास बुझायेगा जिसमें 400 परिवार पूर्ण रूप से विस्थापित होंगे। **एलाइन घुहंगन, चमेरा तीन, पार्वती बांध, कोल डेम, नाथपा–झाखड़ी व अन्य प्रोजेक्टों के विस्थापित आज भी पुनर्वास व न्याय के लिए**

संघर्ष कर रहे हैं।

ऐसे ही हालात आज किन्नौर घाटी के प्रोजेक्ट विस्थापितों व प्रभावितों की है। **करछम–वांगतू में न्याय मांग रहे निहत्थे आदिवासियों पर गोलियां बरसाई जाती हैं। कई साथियों पर झूठे केस बना दिये जाते हैं। कंपनी के गुण्डे, दलाल आये दिन डराते धमकाते रहते हैं।** कई जगह पहाड़ व गांव इन प्रोजेक्टों की वजह से धंस रहे हैं। पानी के चश्में व स्रोत सूख गए हैं। लघु जल विद्युत परियोजनाएं जो छोटे नदी, नालों पर लगाए गए हैं या लगाए जा रहे हैं उसकी वजह से स्थानीय लोगों के घराट बंद हो गए हैं। पीने के पानी तथा सिंचाई के साधन व अन्य रोजगार लोगों से छिन गए हैं। इन परियोजनाओं में रोजगार के नाम पर निर्माण के समय तक मजदूरी के अलावा आम आदमी को कुछ नहीं मिलता। प**रियोजना के पूर्ण होने पर वहां एक चौकीदार व इंजीनियर का काम रह जाता है।** वनों के विनाश का सबसे बड़ा कारण ये सैकड़ों जल विद्युत परियोजनाएं ही हैं जिन्होंने लाखों एकड़ वन भूमि पानी में डुबोई तथा निर्माण कार्य में करोड़ों पेड़ों को नष्ट किया है। **पहाड़ों में 500 किलोमीटर लंबी सुरंगे खोद दी गई है तथा हजारों किलोमीटर प्रस्तावित हैं। नदियों का रास्ता मोड़ कर उन्हें नालों में तब्दील कर दिया गया है। सतलुज अब पहचान में नहीं आती और ब्यास नदी का पानी सतलुज के साथ मिलकर अपनी अस्मिता खो चुका है।**

आज प्रदेश के स्थानीय लोगों को इन जल विद्युत परियोजनाओं के कारण एक और समस्या का सामना करना पड़ रहा है और वह है टावर लाईन। सतलुज, ब्यास, रावी, पब्बर नदी घाटी तथा बिलासपुर, मण्डी, सोलन, चम्बा, किन्नौर, नालागढ़ में टावर लाइनों का जाल बिछा दिया गया है। ये लाइनें खेती, बागवानी, वन तथा जीव जगत के स्वास्थ्य के लिए घातक हैं। लोग इनके नीचे दहशत में जीने को मजबूर हैं जबकि अगले कुछ वर्षों में और लाईनों को बिछाने का प्रस्ताव है।

हिमाचल प्रदेश में भूमि सुधार कानून की धारा 118 के तहत बाहरी नागरिक को प्रदेश में भूमि खरीदने की इजाजत नहीं है परंतु इस कानून को कमजोर करने की कोशिश हो रही है खासकर बड़े पूंजीपतियों के लिए। **गग्रेट ऊना में हवाई अड्डे का विशेष आर्थिक क्षेत्र प्रस्तावित किया गया है** जिससे लगभग 60 हजार लोग विस्थापित व प्रभावित होंगे तथा 8 हजार एकड़ भूमि अधिग्रहीत किये जाने का प्रस्ताव है। जिसका स्थानीय लोगों ने जमकर विरोध किया है। मनाली में हजारों एकड़ भूमि 'हिमालयन स्की विलेज' को देने की योजना पिछले 5 सालों से चल रही है। इस प्रोजेक्ट से हजारों परिवार प्रभावित होंगे तथा यहां की उत्तम सेब की खेती खत्म हो जायेगी। डमटाल से पौंटा तक कृषि भूमि बड़े उद्योगों, जिनमें अधिकतर रासायनिक उद्योग हैं, उन्होंने हड़प ली है। नदी, नालों में पत्थरों के लिए गैरकानूनी खनन जोरों पर है जिससे बची–खुची कृषि भूमि भी नष्ट हो रही है तथा यहां पर पानी तथा वायु प्रदूषण चरम सीमा पर है।

बद्दी बरोटीवाला नालागढ़ (बीबीएन) 318 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है। **इस क्षेत्र में वर्ष 2000 में 250 उद्योग थे आज इनकी संख्या बढ़कर 2000 हो गयी है** जिसमें रोजाना टनों के हिसाब से ठोस कचरा व रासायनिक व विषैले तैलीय पदार्थ निकलते हैं, जो संबंधित महकमों की सुस्ती व उद्योगपतियों की लापरवाही से पर्यावरण को दूषित करने का कारण बन गए हैं। बद्दी बरोटीवाला नालागढ़ विकास प्राधिकरण बनाकर यहां टी.सी.पी. नगर योजना कानून लगा दिया गया है। इसके मास्टर प्लान में 300 के लगभग गांव भी शामिल कर लिए गए हैं। अब इस क्षेत्र में **अपने खेत में घर बनाने के लिए भूमि उपयोग बदलने के टैक्स के रूप में हजारों रुपये लोगों को देना पड़ेगा जबकि उद्योगों को इस में भारी छूट है। सरकार की योजना इस काले कानून को प्रदेश के सभी गांवों में लागू करने की है जो कि ग्रामीणों के हितों के विरूद्ध है।**

बिलासपुर से करीब 50 किलोमीटर दूर एक बांध का निर्माण कार्य पूरा होने जा रहा है जिसका नाम है कोल बांध। पिछले आठ साल से इस बांध पर काम जारी है। करीब दो दर्जन गांव इस बांध से विस्थापित हुए उन्हें ऊपर पहाड़ को काट कर बसा दिया गया। जो प्लॉट दिए गए, उन पर लोगों ने मकान तो बनवा लिए हैं लेकिन न तो उनके पास खेती है, न जंगल और न मवेशी। **दिन में एक बार टेंकर से पानी की सप्लाई होती है। सतलुज के पानी को सुरंग में मोड़ दिया गया है जिसे बांध बनाने के बाद छोड़ा जाएगा।** एनटीपीसी की इस परियोजना में एक इटैलियन–थाई कंपनी भी काम कर रही है जिसका काम पहाड़ों को तोड़ना है। कोल बांध से विस्थापितों के हर परिवार को 40X 50 के प्लॉट दिए गये और कहा गया कि बांध के निर्माण कार्य में नौकरी दी जायेगी। नौकरी तो दी लेकिन अब निर्माण कार्य खत्म होने के बाद लोग क्या करेंगे? यह सवाल लोगों के सामने बना हुआ है।

इस तथाकथित विकास के महायज्ञ में दौड़ को जारी रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है 'एशियन डवलपमेंट बैंक' (एडीबी), विश्व बैंक, पावर फाइनेंस कॉरपोरेशन, यूरोपियन बैकों के अतिरिक्त घरेलू बैक– नाबार्ड तथा कांगड़ा कोऑपरेटिव बैंक। एडीबी ने मार्च 2010 में हिमाचल प्रदेश पावर कॉरपोरेशन लिमिटेड (एचपीपीसीएल) के माध्यम से प्रदेश में बनने वाली चार जल विद्युत परियोजनओं के लिए 800 मिलियन डॉलर का ऋण मंजूर किया। बैंक का कहना है कि प्रदेश में उपलब्ध संसाधनों से 23 हजार मेगावाट जल विद्युत उत्पादन की क्षमता है जबकि अभी सरकारी, गैरसरकारी उपक्रम और निजी निवेशक मात्र 6480 मेगावाट जल विद्युत का उत्पादन कर पा रहे हैं।

एडीबी और एचपीपीसीएल में हुए अनुबंध के तहत जल विद्युत परियोजनाओं की प्रगति रिपोर्ट के आधार पर ऋण की आगामी किस्त जारी की जाएगी। एचपीपीसीएल स्वीकृत ऋण एडीबी को 25 वर्ष में वापस करेगा। एडीबी का यह भी कहना है कि वह इन परियोजनाओं में धन की कमी नहीं आने देगी। यहां पर हिमाचल

प्रदेश और केन्द्र सरकार के संयुक्त उपक्रम हाइड्रोपावर जेनरेटर सतलुज जल विद्युत निगम (एसजेवीएन) के निवेश का भी जिक्र करना आवश्यक है, क्योंकि एसजेवीएन अगले पांच सालों में 15,000–16,000 करोड़ रुपये का निवेश करके मौजूदा 1,500 मेगावाट के क्षमता को बढ़ाकर 6,500 मेगावाट करना चाहती है। इसके लिए कंपनी ने अपनी विस्तार योजना में प्रदेश के रामपुर में 412 मेगावाट की एक हाइड्रोइलेक्ट्रिक परियोजना को शामिल किया है। इस परियोजना पर काम चल रहा है और यह सितम्बर 2013 तक पूरा हो जाएगा। इसके अलावा दो परियोजनाएं पाइपलाइन की हैं उनमें लुहरी (775 मेगावाट) और खाब हाइड्रोइलैक्ट्रिक प्रोजेक्ट 1,020 मेगावाट शामिल है जिसके लिए परियोजना की विस्तृत रिपोर्ट जमा कर दी गई है।

संघर्ष : कदम दर कदम

इन विनाशकारी परियोजनाओं के दूरगामी तथा तात्कालिक प्रभावों को जानते–समझते हुए हिमाचल प्रदेश में कदम–दर–कदम संघर्ष चल रहे हैं। यह संघर्ष एक तरफ जल, जंगल, जमीन, प्रकृति तथा अपनी आजीविका एवं अस्तित्व की रक्षा के लिए हैं तो दूसरी तरफ कम्पनियों, कारपोरेट्स तथा सरकारी साजिशों और दमन–उत्पीड़न के खिलाफ हैं।

टिडोंग I जल विधुत परियोजना विरोधी संघर्ष :

टिडोंग I 199 मेगावाट जल विद्युत परियोजना का निर्माण 'विडु सीड्स लि. (हैदराबाद स्थित कंपनी जो बीज बनाने का कार्य करती है) द्वारा प्रस्तावित है। कंपनी ने अपनी डीपीआर व ईआईए रिपोर्ट में 39.20 हैक्टेयर वन भूमि पर औसतन प्रति हैक्टेयर 355 पेड़ के हिसाब से परियोजना में कुल 13916 पेड़ों का नुकसान होना दर्शाया है लेकिन वन विभाग व कंपनी ने फोरेस्ट क्लीरियंस के लिए जो प्रस्ताव पर्यावरण व वन मंत्रालय भारत सरकार को भेजा उसमें केवल 1261 पेड़ों के कटान की अनुमति मांगी जिसे भारत सरकार ने स्वीकार कर लिया। **इसमें 80 प्रतिशत चिलगोजे (चिलगोजा दुनिया में दो ही जगह पर होता है– अफगानिस्तान व किन्नौर) के पेड़ मौजूद हैं।** जब गांव के लोगों को कंपनी द्वारा की जा रही बदमाशी का पता चला तो ग्रामसभा रिस्पा ने कंपनी को अनापत्ति प्रमाण पत्र नहीं दिया। ग्रामसभा रिस्पा ने 39.20 हैक्टेयर वन भूमि लीज पर देने व निजी भूमि अधिग्रहण पर भी अपत्ति उठाई लेकिन **प्रशासन ने निजी भूमि अधिग्रहण के लिए भू–अधिग्रहण अधिनियम की धारा 17(4) की अधिसूचना जारी कर दी और वन भूमि लीज पर देने के लिए भी अधिसूचना जारी कर दी जो कि अनुसूचित क्षेत्रों में जनजातीय कानूनों के विरूद्ध है।** क्योंकि किन्नौर जिले को संविधान की धारा 244(1) के तहत शैडयूल्ड एरिया घोषित कर पांचवीं अनुसूची के अन्तर्गत लाया गया

है और इस क्षेत्र को एक सशक्त संवैधानिक व वैधानिक सुरक्षा प्रदान की गई है। इस अनुसूचित क्षेत्र में जनजातीय लोगों को वैधानिक संरक्षण प्रदान करने हेतु– हिमाचल प्रदेश ट्रांसफर ऑफ लैंड (रेगुलेशन) अधिनियम 1968 तथा पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम 1968 (पेसा) की धारा–4(a), (d), (i), (k), (I) तथा जनुसूचित जनजाति एवं अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) 2006 की धारा–3(1), (b), (c), (d), (i), (j), (k) तथा धारा 5 के तहत अनुसूचित व जनजातीय क्षेत्रों में परियोजना के लिए निजी भूमि अधिग्रहण व वनभूमि तथा अधिकारों के हस्तांतरण के लिए संबंधित ग्रामसभाओं की सहमति प्राप्त करने का अनिवार्य कानूनी प्रावधान है।

इसके अतिरिक्त संविधान के अनुच्छेद 38, 39, 46, 47, 48 I, 51 I आदि द्वारा भी जनजातीय लोगों को संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है।

इन कानूनी हकों के आधार पर ग्रामसभा ने उपायुक्त किन्नौर को अपनी आपत्ति दर्ज करवायी जिस पर 'विडु सीडस लिमिटेड' कंपनी ने ग्राम पंचायत के प्रधान व ग्रामसभा रिस्पा को एक धमकी भरा पत्र लिख कर चेतावनी दी कि यदि ग्रामसभा रिस्पा 31 मार्च 2009 तक अनापत्ति प्रमाण पत्र जारी नहीं करती है तो कंपनी 1 अप्रैल 2009 से निर्माण कार्य शुरू कर देगी। कंपनी ने यह भी कहा कि यदि इस दौरान कोई अप्रिय घटना घटती है तो इसकी जिम्मेदारी ग्राम पंचायत व ग्रामसभा रिस्पा की होगी। इसी तरह का धमकी भरा पत्र मूरंग ग्राम पंचायत प्रधान व ग्रामसभा को भी दिया गया। ग्रामसभा मूरंग तथा रिस्पा आज भी अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर रही है।

ये तो एक कंपनी का उदाहरण मात्र है इस क्षेत्र में लगने वाली तमाम कंपनियां धडल्ले से कानूनों को तोड़ रही हैं। जे.पी. कंपनी तो इससे भी दो कदम आगे चल रही है– करछम–वांगतू परियोजना

में अवैध खनन, बाल्टनरंग गांव के बीचों–बीच एक वृहद क्रेशर प्लांट लगाना, शौगठांग से लेकर नाथपा बांध तक अवैध मक डम्पिंग, लीज मंजूर होने से पहले ही निर्माण कार्य शुरू कर देना, करछम–वांगतू में लगभग 400 बीघा वन भूमि पर अवैध कब्जा, अवैध सुरंगों का निर्माण आदि। किन्नौर के लोग इन परियोजनाओं का पुरजोर विरोध करते आ रहे हैं। हिमलोक जागृति मंच के साथी किन्नौर में लोगों के साथ संघर्ष में लगे हुए हैं लेकिन सरकार व परियोजना प्रबंधन जनता की आवाज को पुलिस बल के प्रयोग से दबाती आ रही है।

हिमलोक जागृति मंच के साथी बताते हैं कि किन्नौर में इन परियोजनाओं का पुरजोर विरोध किया जा रहा है लोग संघर्ष समितियों का निर्माण कर रहे हैं। लोगों में ज़बरदस्त गुस्सा है क्योंकि सरकार शांतिपूर्ण तरीके से भी अपनी बात नहीं कहने देती है जैसे– वांगतू गोली काण्ड, करछम–वांगतू जल विद्युत परियोजना से प्रभावित ग्रामीण अपने प्रमुख देवता श्री महेश्वर जी चगांव के साथ 9 दिसम्बर 2006 को वांगतू गांव में पारंपरिक पूजा अर्चना के लिए जा रहे थे। ग्रामीण लोग काक्स्थल गांव तक ही पहुंचे थे कि पुलिस ने रोक कर निहत्थे लोगों पर लाठी चार्ज किया और गोलियां बरसाई जबकि लोगों के हाथों में न कोई झण्डे–बैनर थे और न कोई नारे लगा रहे थे। लोगों का आरोप है कि यह जे.पी. कंपनी के इशारे पर किया गया।

सरकारों की लापरवाही की तरफ ध्यान दिलाते हुए हिम लोक जागृति मंच के साथी बताते हैं कि परियोजनाओं को स्वीकृति देते हुए यहां की भौगोलिक व राष्ट्रीय सुरक्षा पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया गया वे गंभीर आरोप लगाते हुए बताते हैं कि –

- सतलुज नदी का क्षेत्र एक अत्यन्त जोखिम भरा क्षेत्र है क्योंकि इस का 90 प्रतिशत क्षेत्र शीत मरूस्थलीय एवं अर्धशीत मरूस्थलीय क्षेत्र में स्थित है; जिससे भूमण्डलीय तापमान में वृद्धि, अनियमित बर्फबारी व वर्षा तथा बादल फटने की स्थिति में सतलुज नदी व इसकी सहायक नदियों में भयंकर बाढ़ की स्थिति हो जाती है जिसका उदाहरण है– 1988 में तिरूंग खड्ड, 1993

में पूनांग खड्ड, 1997 में पानवी खड्ड तथा 2000 व 2005 में सतलुज नदी में प्रलयकारी बाढ़ का आना। इन परियोजनाओं में 275 मीटर ऊँचे बांधों का निर्माण किया जायेगा। उस स्थिति में बाढ़ की स्थिति और भी भयंकर होगी जिससे न केवल किन्नौर को बल्कि सम्पूर्ण उत्तर भारत पर खतरा मंडराने लगेगा।

- दूसरी तरफ किन्नौर में अत्यंत तीव्रता वाले भूकंप आते रहे हैं जिसके फलस्वरूप भारी जान–माल की हानि उठानी पड़ी है। वर्ष 1975 में रिक्टर स्केल पर 6.8 तीव्रता वाला भूकंप आ चुका है और जिससे भारी जान–माल का नुकसान हुआ था। किन्नौर में निर्मित, निर्माणाधीन और प्रस्तावित जल विद्युत परियोजनाओं के जलाशयों व लम्बी–लम्बी सुरंगों के कारण भूकम्प की स्थिति में भारी जान–माल की हानि की संभावनाओं से इन्कार नहीं किया जा सकता।
- किन्नौर जिला भारत–चीन अंतर्राष्ट्रीय सीमा से सटा होने के कारण देश की सुरक्षा की दृष्टि से भी अत्यन्त सामरिक महत्व रखता है। किन्नौर में भारत–चीन सीमा की लम्बाई लगभग 150 कि.मी. है।

सतलुज नदी शिपकीला से वांगतू तक उत्तर पूर्व से दक्षिण पश्चिम की दिशा में बहने के कारण अंतर्राष्ट्रीय सीमा के निकट से बहती है। सतलुज नदी पर बनने वाली परियोजनाएं अंतर्राष्ट्रीय सीमा से लगभग 5 से 20 किलोमीटर हवाई दूरी पर स्थित है जो युद्ध की स्थिति में दुश्मन के लिए साफ्ट टारगेट हो सकते हैं; विशेष कर खाब–श्यासो बांध (जिसकी ऊँचाई 275 मीटर प्रस्तावित) व सुरंगों को शत्रु के हमले में एक साथ बर्बाद कर दिया गया तो सतलुज में प्रलयंकारी बाढ़ अचानक से आ सकती है जिससे जानमाल की भयंकर तबाही हो सकती है।

करछम–वांगतू परियोजना संघर्ष समिति, खाब–श्यासो परियोजना संघर्ष समिति, बास्पा प्रोजेक्ट संघर्ष समिति, हिम लोक जागृति मंच तथा हिमालय नीति अभियान जैसे संगठन किन्नौर में जनता की आवाज बनकर उभर रहे हैं, यह संगठन किन्नौर में जल विद्युत

परियोजनाओं से पर्यावरण राष्ट्रीय सुरक्षा, जनजातीय अधिकारों का हनन, विस्थापन, पुलिस दमन के विरोध में संघर्षरत हैं।

इन प्रोजेक्टों के अन्तर्गत सुरंग बनाने के लिए किये जाने वाले ब्लास्टिंग की वजह से ऊपर के गांवों में रहने वाले लोगों के घरों में दरारें आना, घरों पर चट्टाने गिरना, अवैध डम्पिंग करना, धूल इत्यादि घटनाएं तो आज रोज की ही बात हो गई हैं।

नाथपा–झाखडी (1500 मेगावाट) परियोजना के प्रभावितों का आज तक पुनर्वास नहीं किया गया है। कंपनी द्वारा डैम व टनल निर्माण के लिए भारी ब्लास्टिंग का प्रयोग किया गया जिससे नाथपा व कण्डार गांवों के ऊपर चट्टानें गिरने से दोनों गांव क्षतिग्रस्त हो गये हैं। जिओलॉजिस्ट ने भी इन गांवों को असुरक्षित घोषित किया है। **कंपनी ने कण्डार गांवों के लोगों को टीन–शैड्स में शिफ्ट कर दिया और मकान बनाने के नाम पर प्रति परिवार 2.40 लाख रुपये मुआवजा दे दिया गया; जबकि एक तो यह राशि अपर्याप्त है दूसरी बात प्रभावित लोग मकान किस जगह बनायें, यह भी सुनिश्चित नहीं है।**

नाथपा गांव में अभी तक चट्टानें गिरने से 6 लोगों की मौतें हो चुकी हैं और मकान व सम्पत्ति को भारी हानि हुई है। इस गांव को भी भू–वैज्ञानिकों ने असुरक्षित घोषित कर रखा है परंतु कंपनी अभी तक इनके पुनर्स्थापना व पुनर्वास से बचती आ रही है।

इसी तरह से काशंग 243 मेगावाट जल विद्युत परियोजना में निर्माण कार्य व हेवी ब्लास्टिंग से पांगी गांव के लगभग 120 लोगों के घरों में दरारें आ गई हैं। काशंग संघर्ष समिति द्वारा बार–बार हिमाचल पावर कारपोरेशन लिमिटेड कंपनी को अवगत कराने पर भी कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा हैं। साथ ही कंपनी द्वारा सड़क बनाने के लिए तोड़े गये पहाड़ व निर्माण कार्य से धूल उड़ रही है जिससे लोगों के सेब के बगीचे खराब हो रहे हैं। यह कुछ उदाहरण हैं जो इन जल विद्युत परियोजओं से उत्पन्न हुए हैं यह स्थिति आज

कमोबेश सभी परियोजनाओं से उत्पन्न हो रही है। **लोगों में गुस्सा बढ़ रहा है। अब देखना यह है कि लोगों का सब्र कब टूटता है।**

जिस्पा बांध विरोधी आंदोलन, केलांगः

केलांग (लाहौल–स्पीति) भी किन्नौर की तरह एक जनजातीय जिला है। हिमाचल प्रदेश का आखिरी जिला है जिसकी सीमाएं किन्नौर व चीन (तिब्बत) से लगती हैं। हिमाचल प्रदेश पॉवर कारपोरेशन ने चन्द्रा नदी पर लाहौल के जिस्पा गांव के पास जिस्पा 300 मेगावाट की जल विद्युत परियोजना प्रस्तावित की है। परियोजना के लिए चन्द्रा नदी पर 200 मीटर ऊँचा जिस्पा बांध बनाने की योजना है जिसमें लाहौल–स्पीति के पांच गांव जिस्पा, सुमदो, दारचा, हिंक्यूम और दारचा दो विस्थापित होंगे। इस बांध में इन पांचों गांवों की 300 हेक्टेयर भूमि समा जायेगी तथा 124 परिवारों का विस्थापन होगा। तीन चरणों में बनने वाले इस प्रोजेक्ट में पहला पावर हाऊस जिस्पा में दूसरा शिटी नाला में व तीसरा स्टींगरी में होगा। प्रोजेक्ट का डैम जिस्पा में बनेगा, जो तिब्बत बार्डर से महज 50 किलोमीटर दूर है। इस डैम के कारण सेना की लाइफ लाइन कहे जाने वाले और सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण मनाली–लेह मार्ग का 25 किलोमीटर दायरा भी डूब में आयेगा जबकि जिस्पा से कमांडर नाला तक 12 किलोमीटर लम्बी सुरंग का निर्माण किया जायेगा जिससे भारत तिब्बत सीमा की चार में से तीन पंचायतें पूर्ण रूप से प्रभावित होने वाली है।

इसका सशक्त विरोध करने के लिए जिस्पा बांध संघर्ष समिति का गठन किया गया है जिसने प्रस्तावित बांध के विरोध में जन समर्थन जुटाने के लिए हस्ताक्षर अभियान शुरू कर दिया है। 30 मई 2010 को संघर्ष समिति ने जिस्पा के फोटांग में तोद घाटी की तीनों पंचायतों– कोलंग, दारचा और यूरनाथ के लोगों की एक आपात बैठक बुलाई जिसमें संघर्ष की रणनीति पर चर्चा की गई तथा दो कमेटियों का निर्माण किया गया। एक कमेटी किन्नौर व रेणुका का

दौरा कर परियोजनाओं के बनने से वहां हुए प्रभावों का अध्ययन कर क्षेत्रवासियों को अपने अनुभव बतायेगी। दूसरी कमेटी जिस्पा बांध के विरोध में राष्ट्रीय स्तर पर जनसमर्थन जुटाने का कार्य करेगी। संघर्ष समिति के संयोजक के रूप में जिला परिषद के उपाध्यक्ष रिगजिन समफेल हायरप्पा का चुनाव किया गया।

जिस्पा बांध संघर्ष समिति ने 7 जून 2010 को सितिंगरी से केलांग तक लगभग 7 किलोमीटर लंबी पैदल यात्रा निकाली जिसमें लगभग एक हजार महिला और पुरुषों ने भाग लिया। **संघर्ष समिति के संयोजक रिगजिन ने जिला परिषद उपाध्यक्ष पद से इस्तीफा देने का ऐलान करते हुए कहा कि प्रदेश सरकार ने जल विद्युत परियोजनाओं के नाम पर 11 जिलों को तबाह कर दिया गया है।** अब लाहौल–स्पीति को तबाह करने की तैयारी हो रही है। पहाड़ों को तबाह कर मैदान के बड़े भागों को रोशन करने की कवायद सरकार और धन्नासेठों ने शुरू की है। **राष्ट्रीय महत्व का अर्थ यह नहीं है कि गांवों को उजाड़ कर परियोजनाएं बनाई जाएं।**

सभा के अन्त में एक प्रस्ताव पारित किया गया जिसमें सरकार को चेतावनी देते हुए लोगों ने ऐलान किया कि **इस प्रोजेक्ट को किसी भी कीमत पर नहीं बनने दिया जायेगा, चाहे इसके लिए अपनी जान की बाजी भी लगानी पड़े, तो भी हम लोग पीछे नहीं हटेंगे।**

सेज़ विरोधी आंदोलन, ऊनाः

सबसे पहले सिर्फ हवाई अड्डा बनाने की ही बात बता कर कांग्रेस के पूर्व मंत्री व विधायक कुलदीप कुमार ने काफी वाहवाही लुटी। जब सरकार बदली तो वर्तमान विधायक बलबीर चौधरी ने भी लोगों को विकास का सब्ज़बाग दिखाकर लोगों को गुमराह करना शुरू किया। 29 फरवरी 2008 को जिलाधीश ऊना के पत्र संख्या 1718–19 के अनुसार नायब तहसीलदार अम्ब व कंपनी के कर्मचारी जी.एस.ग्रेवाल ने तुकबंदी बनाकर इस क्षेत्र के अम्बोटा, संघनई

(जीतपुर बेहड़ी), भटयालका, घननोवाल व दियोली, नंगल जरियाला व चौकी व हरवाल, भदगकाली, गोंदपुर बनेहड़ा, नकड़ोह, केलाश नगर, कुनेरन, भन्जाल, कड व मुबारिकपुर का गुपचुप सर्वे जनता व ग्राम पंचायतों को बताए बिना पटवारखानों में बैठकर शुरू कर दिया। क्षेत्र के इन गांवों के लोगों को सच्चाई से अवगत करवाना जरूरी नहीं समझा गया। इस पत्र द्वारा चार कानुनगों हल्का चलेट, गग्रेट, गोंदपुर बनहेड़ा व अम्ब लिये गये। इन हल्कों में और भी कई गांव आते हैं लेकिन इस बारे में चुप्पी रही कि बाकी गांव हैं या नहीं।

मार्च 2008 में मातृभूमि संघर्ष समिति के बैनर तले इस परियोजना से संबंधित जानकारियों को एकत्रित करना शुरू किया गया।

मातृभूमि संघर्ष समिति के कानूनी सलाहकार साथी नरेन्द्र परमार बताते हैं कि ''नायब तहसीलदार अम्ब द्वारा जो सर्वे रिपोर्ट तैयार करके उच्चाधिकारियों को सौंपी गई वह आधी–अधूरी, सच्चाई से दूर व सरासर झूठ का पुलिंदा है। रिपोर्ट कुल 41,000 कनाल भूमि की थी जबकि कंपनी की मांग 80,000 कनाल है। हमने गग्रेट क्षेत्र में प्रस्तावित एस.ई.ज़ैड. के प्रथम चरण का नक्शा प्राप्त किया जिसमें कंपनी दोनों पहाड़ियों के बीच की 4.5 किलोमीटर चौड़ी व 9 किलोमीटर लंबी घाटी को अधीग्रहीत करने वाली थी।'' परमार सर्वे रिपोर्ट पर आगे बताते है **कि इस योजना से 26 गांव, 30 पंचायतों के 60 हजार लोगों का विस्थापन होना है लेकिन सरकार कह रही है कि 10 गांवों के 345 मकान इस योजना में आ रहे हैं और सबसे ज़्यादा आश्चर्यजनक बात तो यह है कि खेती की भूमि को बंजर भूमि प्रदर्शित कर दिया गया है।**

कंपनी द्वारा जारी नक्शे के अनुसार भंजाल से लेकर लगभग डंगोह तक टी.वी. फिल्म प्रोडक्शन, शूटिंग के लिए नकली गांव व पार्क, कंपनी का अपना पुलिस स्टेशन, कोर्ट व प्रशासन तथा फिल्मी एक्टरों के लिए भव्य मकान बनाये जायेंगे। बाकी के क्षेत्र में कृषि, हवाई अड्डा, होटल, मनोरंजन के अन्य साधन होंगे।

साथी दुलम्भ सिंह बताते हैं कि हमने सूचना के अधिकार के तहत

सरकार से जानकारी मांगी की कंपनी को कुल कितनी भूमि की आवश्यकता है तथा इस भूमि की कीमत क्या होगी?

सरकार ने जो जानकारी दी वह थी 1 लाख 15 हज़ार कनाल भूमि कंपनी को चाहिए इसका मतलब है कि अम्बोटा से मरवाड़ी, मुबारिकपुर से सलौह बैरी तक के सभी 26 गांवों का अस्तित्व खत्म हो जाएगा। वह भी 15,000 से 20,000 हजार रूपये प्रति कनाल के निम्नतम दरों पर। **जब इन जानकारियों को हम लोगों के बीच लेकर गये तब लोग आंदोलन में जुड़ते चले गये।**

भाखड़ा बांध : विस्थापितों का संघर्ष:

आजाद भारत के छठे दशक में सबसे पहले बिलासपुर के लोगों ने राष्ट्रहित में अपनी मातृभूमि जलमग्न करके भाखड़ा बांध निर्माण के लिए कुर्बानी दी। भाखड़ा बांध में बिलासपुर शहर सहित इस जिले के 256 गांव डूबे थे जिसमें लगभग 10 हजार एकड़ कृषि भूमि तथा 20 हजार एकड़ वन भूमि डूब गई तथा ऊना जिले के लठयाणी इलाके की 10 हजार एकड़ भूमि भी इस बांध में समा गई थी। इस बांध के कारण 11,777 परिवार विस्थापित हुए थे। 1495 परिवारों को भूमि के बदले भूमि हिसार, सिरसा व फतेहाबाद के 33 गांवों में दी गई जहां पर आज तक वे ठीक से बस नहीं पाये तथा दूसरे दर्जे के नागरिक का जीवन जीने को मजबूर हैं। बाकी सभी विस्थापित यहीं बिलासपुर के जंगलों तथा आसपास के क्षेत्रों में भूमि खरीद कर बसने को मजबूर हुए। इन लोगों को मुआवजे के रूप में सिंचित भूमि का हजार रूपये प्रति एकड़ तथा असिंचित भूमि का 250 रूपये प्रति एकड़ के हिसाब से भुगतान किया गया था जबकि भूमिहीनों को मात्र 200/–रू. देकर यहां से हटा दिया गया था।

भाखड़ा बांध बनने से पहले 7 जुलाई 1948 को राजा बिलासपुर व पंजाब सरकार के बीच भाखड़ा विस्थापन पुनर्वास तथा अन्य मुद्दों पर एक अनुबंध हुआ इसी अनुबंध के आधार पर भाखड़ा डैम एग्रीमैंट एंड बिलासपुर एडमिनिस्ट्रेशन नामक दस्तावेज बनाकर दिनांक 31 मई 1949 को भारत सरकार को भेजा गया। इन दस्तावेजों में

विस्थापितों के पुर्नावास तथा बिलासपुर राज्य को कई सुविधायें देने का प्रावधान किया गया था जिन्हें आज तक लागू नहीं किया गया।

बिलासपुर के लोगों में डूबने से पहले यह आम धारणा थी कि राजा का बोल और नदी का रूख नहीं बदलता परन्तु सन् 1960 तक यह पूरा क्षेत्र जलमग्न हो गया। बिलासपुर के भाखड़ा गांव में स्थित यह बांध नांगल टाउनशिप से 13 किलामीटर दूर है। यह बांध विश्व का सबसे ऊंचा ग्रेविटी बांध है। बांध पर बनी झील लगभल 90 किलोमीटर लंबी है तथा 168 वर्ग किलोमीटर में बांध फैला हुआ है। यह बांध बिलासपुर का 90 प्रतिशत और ऊना का 10 प्रतिशत क्षेत्र घेरता है। इस बांध को 20 नवंबर 1963 को पंडित जवाहर लाल नेहरू ने राष्ट्र को समर्पित किया था।

इसके लगभग एक दशक बाद भाखड़ा बांध के विस्थापितों के लिए सन् 1971 में हिमाचल प्रदेश सरकार ने पुर्नवास व पुर्नस्थापना योजना बनाई इसके तहत जमीन तथा अन्य सुविधायें विस्थापितों को देने का प्रावधान किया गया परन्तु इस योजना को पूरी तौर पर लागू नहीं किया गया।

आज तक भाखड़ा बांध से विस्थापित हुए परिवारों की पुर्नस्थापना व पुनर्वास का कार्य पूरा नहीं हो पाया है। आज यह लोग मूलभूत सुविधाओं जैसे सिंचाई, पीने का पानी, आने जाने के साधन, सड़के–पुल, शिक्षा, स्वास्थ्य, बिजली इत्यादि की समस्याओं से जूझ रहे हैं। ग्रामीण भाखड़ा विस्थापित सुधार संगठन पिछले कई वर्षों से भाखड़ा बांध से विस्थापितों की समस्याओं पर लगातार संघर्ष कर रहा है। इस संगठन ने सुप्रीम कोर्ट में भाखड़ा बांध के विस्थापितों के पुनर्वास से संबंधित एक पी.आई.एल. दायर कर रखी है जिसमें नंदलाल शर्मा भाखड़ा बांध के विस्थापितों का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

जे.पी. सीमेंट ग्राण्डिक यूनिट तथा थर्मल प्लांट विरोधी आंदोलन, बघेरीः

11 जून 2007 को क्षेत्रीय अखबारों के माध्यम से लोगों को पता चला कि जे.पी. कंपनी बघेरी, टिक्करी, पंडियान, (तहसील नालागढ़, जिला

सोलन, हिमाचल प्रदेश) गांवों की लूहन्टु नदी में 2.0 एमटीपीए सीमेंट ग्राण्डिग यूनिट तथा 25 मैगावाट मल्टीफ्यूल आधारित थर्मल ऊर्जा प्लांट व 3ग10.89 मेगावाट का डीजल जनरेटर आधारित ऊर्जा प्लांट लगाने जा रही है तथा 27 जून 2007 को हिमाचल प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा जन सुनवाई रखी गयी है।

नालागढ़ क्षेत्र में सक्रिय हिमप्रवेश के साथियों को जब इस बारे में पता चला तो तय किया गया कि प्रस्तावित जन सुनवाई से पहले इस परियोजना से संबंधित जानकारियां एकत्रित की जायें। हिमप्रवेश के साथी जे.एस. दुखिया बताते हैं कि शुरूआत में हमने दो स्तरों पर काम करना शुरू किया– परियोजना से संबंधित जानकारियों को एकत्रित किया साथ ही क्षेत्र के लोगों को भी जागरूक किया। इस परियोजना में 326 बीघा (23 हैक्टेयर) ज़मीन लेना प्रस्तावित था इसमें 199 बीघा भूमि चरावण भूमि थी। जे.पी. कंपनी ने इस भूमि पर निर्माण कार्य करवा लिया था।

दुखिया आगे कहते हैं कि हमने लोगों को थर्मल प्लांट से पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों के बारे में विस्तार से समझाया कि –

- थर्मल प्लांट को चलाने के लिए 650 टन कोयला या 600 टन धान की भूसी व 200 टन नगर परिषद् चण्डीगढ़ का कचरा प्रतिदिन जलाया जाएगा। डीजल जनरेटर प्लांट चलाने के लिए 7 टन डीजल प्रति घंटा जलाया जाएगा। जिससे वायुमंडल में अत्यधिक जहरीली गैसें तथा धूल फैलेगी। इन गैसों व धूल से स्थानीय आबादी के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पड़ेगा तथा कैंसर, सांस के रोग, टी.बी., चर्मरोग, एलर्जी व अन्य बीमारियां फैलेंगी। पशुओं के स्वास्थ्य व खेती पर भी इसका दुष्प्रभाव पड़ेगा। जल, वायु व ध्वनि प्रदूषण, पानी की कमी तथा कृषि भूमि के बंजर हो जाने से भूमि की कीमत में भारी गिरावट आएगी।

- इससे भी अहम बात यह होगी कि थर्मल प्लांट को ठंडा करने के लिए लाखों गैलन पानी की आवश्यकता पड़ेगी, पांच बड़े–बड़े

बोरों से दिन–रात पानी निकाला जायेगा। प्रतिदिन 1075 घनमीटर पानी लगेगा। इतना पानी निकालने के पश्चात हमारे क्षेत्र के पानी के सभी स्रोत सूख जायेंगे। हमारा हरा–भरा क्षेत्र रेगिस्तान बन जायेगा।

22 जून 2007 को जे.पी. कंपनी की परियोजना के विरोध में रैली का आयोजन किया गया जिसमें सभी राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों ने भी भाग लिया तथा योजना को रद्द करने की वकालत की। 27 जून 2007 की जनसुनवाई में लोगों ने जबरदस्त विरोध दर्ज करवाया। जनसुनवाई में जे.पी. तक को भी बोलने नहीं दिया गया। 17 जुलाई 2007 को सरकार ने कंपनी के निर्माण कार्य को हवा एक्ट प्रदूषण को आधार बनाकर बंद करवा दिया। दो आई ए एस अधिकारियों को बर्खास्त किया गया तथा डील पर रोक लगा दी गई।

चरावण भूमि पर कंपनी के निर्माण कार्य के विरोध में सरकार ने सुप्रीम कोर्ट में केस दायर कर दिया। 2009 में हिमाचल प्रदेश में नई सरकार का गठन हो चुका था। जे.पी. कंपनी ने भी अपनी नयी रणनीति के तहत उसी स्थान पर दोबारा 25 मेगावाट से बढ़ाकर 30 मेगावाट की क्षमता करके नए थर्मल प्लांट की स्वीकृति के लिए 7 सितंबर 2009 को जन सुनवाई की हिमाचल प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के माध्यम से घोषणा करवा दी।

इस पर दुखिया कहते है कि अब यह खेद का विषय है कि नई सरकार आने पर जे.पी. कंपनी फिर दोबारा 25 मैगावाट से बढ़ाकर 30 मैगावाट की क्षमता के नये थर्मल प्लांट के लिए जन सुनवाई करवाना चाहती है। जबकि स्थान वहीं है, पंचायतें, पंचायत समिति, जिला परिषद व अत्यन्त प्रदूषण की चपेट में आने वाले लोग वही हैं और थर्मल प्लांट को चलाने के लिए कच्चा माल, कोयला, धान की भूसी व नगर परिषद् का कूड़ा–कचरा वही है तो दुबारा जन सुनवाई का क्या औचित्य है?

7 सितंबर 2009 को जन सुनवाई में हिम प्रवेश, हिमालय नीति

अभियान के साथियों के साथ स्थानीय लोगों, 10 पंचायतों के प्रधान तथा स्थानीय एम.एल.ए, एम.पी. भी मौजूद थे– लोगों की एक ही मांग थी की हमें थर्मल प्लांट नहीं चाहिए। लोगों ने जबरदस्त विरोध दर्ज करवाया। हिमाचल प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने व्यापक जन विरोध को देखते हुए कहा कि जे.पी. कंपनी पंजाब बोर्ड पर थर्मल प्लांट लगा रही है इसलिए यह केन्द्र सरकार के अधिकार क्षेत्र में आता है।

केन्द्र सरकार ने एक कमेटी का गठन कर दिया। इस कमेटी के सामने भी लोगों ने अपना विरोध दर्ज करवाया लेकिन खेद की बात है कि इतने जबरदस्त विरोध के बावजूद भी इस कमेटी से 10 मार्च 2010 को जे.पी. कंपनी को 10 मैगावाट के थर्मल प्लांट की प्रदूषण की स्वीकृति मिल जाती है।

इस कमेटी के निर्णय से पहले ही फरवरी 2010 में सुप्रीम कोर्ट का भी 2007 से लंबित मामले में निर्णय आ जाता है कि जे.पी. कंपनी को चरावण की भूमि 95 साल के लिए लीज़ पर दे दी जाये।

लोगों के विरोध के बावजूद जे.पी. कंपनी प्रशासन, दलाल, न्यायालयों के सहयोग से अपनी योजना पर काम करती जा रही हैं।

14 जनवरी 2010 से जे.पी. कंपनी द्वारा 1.75 एम.टी.पी.ए. का सीमेंट ग्राण्डिंग का प्लांट चालू कर दिया गया जबकि डस्ट नियंत्रण का कोई यंत्र अभी तक कंपनी द्वारा नहीं लगाया गया है।

हालांकि स्थानीय लोग अभी भी आंदोलनरत हैं जिसके तहत 24 मई 2010 को बघेरी में एक विशाल रैली का आयोजन किया गया तथा घोषणा की गयी की इस जन विरोधी कंपनी को यहां से भगाकर ही दम लेंगे।

अन्य सीमेंट कारखानों के विरोध में संघर्षः

प्रदेश में आज पांच सीमेंट कारखाने– बरमाणा, दाडलाघाट, सोलन,

बघेरी (नालागढ़) व राजवन में चल रहे हैं और दर्जनों निर्माणाधीन हैं। सुन्दरनगर और अलसीन्डी में लोगों के घोर विरोध के बावजूद सीमेंट कारखानों के लिए भूमि अधिग्रहण सरकार कर रही है। चम्बा में सिकरी धार व शिमला के गुम्मा में सीमेन्ट कारखाने शुरू होने वाले हैं। सीमेंट उद्योग पर्यावरण व मानव स्वास्थ्य के लिए सबसे घातक हैं। उक्त सभी बिजली व सीमेंट के कारखाने सबसे ज्यादा पर्यावरण, वन व अन्य सुरक्षा कानूनों की खुलेआम अवहेलना कर रहे हैं। पर्यावरण सुरक्षा की दुहाई देने वाली हमारी सरकारें कुछ नहीं कर रही हैं बल्कि उलटे इन परियोजनाओं के लिए संरक्षित वन क्षेत्र, सेंचुरी नेशनल पार्क जिसमें पार्वती परियोजना के लिए जी.एच.एन. पार्क, अम्बुजा सीमेंट के लिए दाडलाघाट सेंचुरी, सुन्दरनगर सीमेंट उद्योग के लिए सुन्दर नगर सेंचुरी, रेणुका बांध के लिए रेणुका सेंचुरी डीनोटीफाईड कर दी गई है।

रेणुका बांध विरोधी आंदोलनः

रेणुका बांध का विचार सन् 1960 के दशक में आया था। फिर सन् 1994 में हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के बीच बांध निर्माण व जल वितरण को लेकर आम सहमति बनी। परंतु इस वर्ष कानून मंत्रालय ने कहा है कि यह समझौता वैध नहीं है क्योंकि राजस्थान ने अब तक इस पर हस्ताक्षर ही नहीं किए हैं। हरियाणा भी इस समझौते से नाखुश है क्योंकि पानी की मात्रा कम होने की दशा में अन्य राज्यों के हिस्से में कमी होगी, लेकिन दिल्ली के हिस्से में नहीं। इसलिए हरियाणा अब रेणुका बांध से छोड़े जाने वाले पानी व बिजली दोनों में अपना हिस्सा चाह रहा है। दिल्ली में पेयजल की आपूर्ति करने वाले दिल्ली जल बोर्ड का कहना है कि 1994 के अनुबंध से यह साफ है कि रेणुका बांध का पानी दिल्ली को ही मिलेगा।

हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिले में यमुना की सहायक नदी 'गिरी' पर 2007 में रेणुका बांध बनाने की घोषणा की गयी। 27 अरब रूपये की इस योजना से 148 मीटर की ऊंचाई वाला रेणुका बांध

बनना है जिससे 23 क्यूबिक पानी मिलने और 40 मेगावाट बिजली बनाने की बातें जोरशोर से की जा रही हैं। 2200 हेक्टेयर सिंचित जमीन के साथ–साथ 17 लाख पेड़ों के डूबने, 70 पंचायतों के 37 गांवों के 700 परिवारों के विस्थापन और रोजी–रोटी के बड़े संकट को नजरअंदाज किया जा रहा है। रेणुका बांध जनसंघर्ष समिति के साथी पूर्णचंद का कहना है कि **''पहले हम अधिक मुआवजे की बात कर रहे थे पर अब हम बांध ही नहीं चाहते क्योंकि अगर हम अपनी भूमि देने को तैयार भी हो जाते हैं तो मिलने वाला मुआवजा बाजार मूल्य की तुलना में जरा–सा ही है। जब देश की बाकी जगहों पर सब्जियां और फल पैदा होना बंद हो जाते हैं, तब यहां की उपजाऊ जमीन पर कई नकदी फसलें जैसे– अदरक, लहसुन, टमाटर, शिमला मिर्च, बीन, बैंगन और फूलों की खेती होती है। इसके अलावा गेहूं, मक्का, धान और दालों की भी अच्छी पैदावार होती है।''**

हालांकि इसी नदी पर 60 मेगावाट क्षमता वाले गिरीबाट बांध मानसून को छोड़कर साल के बाकी 9 महीनों में मात्र 8 से 9 मेगावाट बिजली का उत्पादन कर पाता है। ऐसी स्थिति में रेणुका बांध 40 मेगावाट बिजली किस प्रकार उत्पादित कर पाएगा?

यूं भी यदि दिल्ली को साल में 9 महीने हर दिन कम से कम एक अरब 24 करोड़ लीटर पानी देना है तो टरबाईन चलाने के लिए पानी कहां से उपलब्ध होगा? पूर्णचंद आगे कहते हैं कि **रेणुका बांध का हर स्तर पर विरोध किया जा रहा है। मई 2009 के लोकसभा चुनावों का बहिष्कार भी किया गया था। छह गावों में एक व्यक्ति ने भी मतदान में हिस्सा नहीं लिया था। महिलाएं भी आंदोलन में सक्रिय है। 37 गांवों के महिला मण्डलों की तरफ से बड़े पैमाने पर वृक्षों को राखी बांधी गयी है। उधर रेणुका बांध विस्थापितों ने वन एवं पर्यावरण मंत्रालय की ओर से बांध के लिए दी गई एनओसी को एफिलेट अथॉरिटी के पास चुनौती दी है। ये अपील मोहतू गांव के किसान ने दायर की है। अपील मुख्यतः तीन मुद्दों पर**

आधारित है। ग्लोबल वार्मिंग को देखते हुए रेणुका बांध का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ेगा? बांध बनने के बाद लगभग 24 किलोमीटर झील बनने पर वाष्पीकरण अधिक होगा। इससे अकस्मात वर्षा, बादल फटने, तापमान में बदलाव व सलाईडिंग के खतरे बढ़ेंगे। इसे बांध प्रबंधन ने गंभीरता से नहीं लिया। **रेणुका बांध जनसंघर्ष समिति पिछले 3 साल से इस प्रोजेक्ट के विरोध में संघर्षरत है।**

पख़नोज नाला (हरिपुर नाला) माईक्रोहाइड्रो प्रोजेक्ट विरोधी आंदोलनः

हरिपुर नाला जिला कुल्लू में इन्टरा कॉन्टीनेटल प्रा. लि. कम्पनी द्वारा 1.5 मेगावाट का मिनी हाइड्रो प्रोजेक्ट प्रस्तावित किया गया है। इस हाइड्रो प्रोजेक्ट को लेकर लोगों में तीखा विरोध है। 4 अप्रैल 2010 को ग्राम पंचायत हलाण I ने ग्रामसभा में सर्वसहमति से प्रस्ताव पारित किया है कि इस नाले पर हाइड्रो प्रोजेक्ट मंजूर नहीं है।

जल–जंगल–जमीन बचाओ आंदोलन संघर्ष समिति का स्थानीय लोगों द्वारा निर्माण किया गया है। इस संघर्ष समिति के साथी लालचंद कटोच बताते हैं कि –

- इस पखनोज नाले पर हाइड्रो प्रोजेक्ट बनने से तीन पंचायत (हलाण I, सोयल व करजाँ) के लोग प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होंगे। लगभग 5 हजार हैक्टेयर भूमि की सिंचाई प्रभावित होगी इस क्षेत्र में बागवानी, सब्जी उत्पादन व कृषि लोगों की आजीविका का मुख्य साधन है।
- उपरोक्त तीनों पंचायतों के 109 गांवों को पेयेजल की आूपर्ति का मुख्य स्रोत एकमात्र यही नाला है।
- इस नाले से निकलने वाली चार कूहलों पर 20 चलित घराट है जिस पर लोगों की रोजी–रोटी निर्भर है।
- इसी नाले पर भारत तथा नार्वे के सहयोग से सरकारी मछली फार्म (हैचरी) स्थापित किया गया है क्योंकि इस नाले का पानी

वर्ष भर निर्मल होने के कारण यहां से भारी मात्रा में ट्राउट मछली का उत्पादन होता है और साथ ही मछली का बीज भी अन्य स्थानों पर निर्यात किया जाता है जिससे सरकार को लाखों रुपयों की वार्षिक आय होती है तथा इस पर 40 हजार लोगों की आजीविका भी निर्भर है।

- इस नाले पर सरकार द्वारा 2005 में गठित आई.ए.एस. एम. सिहाग की अध्यक्षता वाली कमेटी ने ट्राउट मछली व पर्यावरण की दृष्टि से कोई भी हाइड्रो प्रोजेक्ट स्थापित न करने का सुझाव दिया था। इसके अतिरिक्त इस नाले पर पांच निजी मछली फार्म भी चल रहे हैं जिसमें कार्यरत 50 लोग अपने परिवार की आजीविका चला रहे हैं।
- इसी क्षेत्र के सरसेई गांव में भारतीय कृषि अनुसंधान केन्द्र भी स्थापित किया गया है जिसमें उन्नत किस्म के बीज तैयार किये जाते हैं।
- इस नाले पर हाइड्रो प्रोजेक्ट के लगने से 15 हजार लोगों पर प्रत्यक्ष रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।
- इस नाले से निकलती कूहलों के कारण कई बार अग्निकांड जैसी आपदा में लोगों ने कई घरों को आपात अग्नि शमन सेवाओं के पहुंचने से पहले बचाया है।

हिमाचल प्रदेश में विकास के नाम पर माइक्रो तथा मैगा हाइड्रो प्रोजेक्ट की बाढ़ सी आ गई है। सरकार प्रदेश को विद्युत प्रदेश बनाने के लिए अन्धाधुन्ध प्रोजेक्ट प्रस्तावित करती जा रही है। लेकिन पर्यावरणीय क्षति प्रदेश की जनता को झेलनी पड़ेगी इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। **यहां पर बहने वाले छोटे नाले लोगों की भाग्य रेखाएं भी हैं। क्योंकि उनका जीवन–यापन इन्हीं पर निर्भर है। यह चाहे सिंचाई के रूप में हो या पीने के पानी के रूप में।**

आज स्थिति यह हो गयी है कि ग्राम पंचायतें ग्राम सभाओं के माध्यम से प्रस्ताव पारित करवा रही हैं कि उन्हें इन विद्युत

परियोजनाओं की आवश्यकता नहीं है, परंतु कंपनियां प्रशासन के सहयोग से कार्य शुरू करती जा रही हैं।

जल–जंगल–जमीन बचाओ आंदोलन संघर्ष समिति ने इस प्रोजेक्ट का जनवरी 2010 से काम रुकवा रखा था लेकिन 28 जुलाई 2010 को इन्टरा कॉन्टीनेटल कम्पनी के गुंडे ग्राम सभा की अनुमति लिये बिना प्रोजेक्ट क्षेत्र में घुस कर पेड़ काटने लगे। कम्पनी द्वारा पेड़ काटे जाने की खबर लगने पर स्थानीय लोगों ने उनको खदेड़ कर भगा दिया परंतु तब तक उन्होंने 33 पेड़ काट डाले थे। संघर्ष समिति के साथी कम्पनी द्वारा पेड़ काटने का केस दर्ज करवाने थाने पर गये तो उनका केस दर्ज नहीं किया गया बल्कि कम्पनी की ओर से संघर्ष समिति के 10 साथियों पर झुठा डैकेती का केस बना दिया गया। इस घटना को ले कर स्थानीय लागों में जबरदस्त आक्रोश है।

7 अगस्त 2010 को मनाली में इस घटना के विरोध में प्रदर्शन का आयोजन किया गया जिसमें हिमाचल प्रदेश के अलग–अलग क्षेत्रों में चल रहे जनसंघर्षों के साथी भी शामिल हुए। हिमालय नीति अभियान के साथी गुमान सिंह ने प्रदर्शन में आये लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा कि सरकार तुरंत प्रभाव से आंदोलन के साथियों पर किया गया झुठा केस रद्द करे तथा कम्पनी के खिलाफ केस दर्ज किया जाय क्योंकि कम्पनी ने अवैध तरीके से क्षेत्र में धुस कर पेड़ काटे हैं। इस घटना की हम कड़ी आलोचना करते हुए चेतावनी देते हैं कि भविष्य में यदि कम्पनी दुबारा क्षेत्र में घुसने की कोशिश करेगी है तो उसके गंभीर परिणाम निकलेंगे।

प्रदर्शन के अंत में एसडीएम मनाली, जिला कुल्लू के माध्यम से मुख्यमंत्री को ज्ञापन दिया गया जिसमें निम्न मांगें रखी गयीं–

- किसानों पर दर्ज झुठा केस रद्द किया जाय।
- इन्टरा कॉन्टीनेटल प्रा. लि. कम्पनी का 1.5 मेगावाट प्रोजेक्ट का एमओयू रद्द किया जाय।

- पखनोज नाले को भी तीरथन नदी की तरह संरक्षित घोषित किया जाय।
- माइक्रो तथा मैगा हाइड्रो प्रोजेक्टों की हिमाचल प्रदेश में बाढ़ सी आ गई है इनके एमओयू तुरंत प्रभाव से रद्द किये जायें।

टावर लाइन एवं पावर पुलिंग स्टेशन विरोधी आंदोलन, बनालाः

बनाला में पिछले दो साल से लोग पावर पुलिंग स्टेशन के विरोध में संघर्ष कर रहे हैं। यहां पर पावर पुलिंग स्टेशन (हब) प्रस्तावित है जिसके अन्तर्गत यहां पर कई परियोजनाओं की बिजली को एक जगह पर एकत्रित करने के बाद उसका वितरण किया जायेगा।

जिस जगह पर पावर पुलिंग स्टेशन का निर्माण किया जाना है वह भूमि हालांकि वन भूमि है लेकिन इस पावर पुलिंग स्टेशन के विरोध में संघर्ष कर रहे महिला मण्डल के साथी गौकुल चंद कहते हैं कि सवाल भूमि का नहीं है– जब हमारी ग्राम पंचायत ने इस परियोजना को अस्वीकार कर दिया है तो प्रशासन क्यों जबरदस्ती कर रहा है? दूसरा वन भूमि पर लाखों पेड़ों को काटा जायेगा जिससे पर्यावरणीय नुकसान तो होंगे ही साथ ही यह पहाड़ भी कच्चा है जिससे यहां पर सलाइडिंग होने का खतरा बहुत ज्यादा बढ़ जाता है। फिर इस पावर पुलिंग स्टेशन में अलग–अलग लाइन बिछाई जायेगी। हमारे घरों पर हाईटेन्शन लाइनों का जाल बिछ जायेगा, हमें मजबूरीवश इस जगह से पलायन करना पड़ेगा। सरकार–प्रशासन–कम्पनी हमारी बातों पर ध्यान नहीं दे रही हैं। **पिछले दो सालों से हम संघर्ष कर रहे हैं, आगे भी करते रहेंगे लेकिन पावर पुलिंग स्टेशन नहीं बनने देंगे।**

हिमाचल प्रदेश में अभी 6 हजार मैगावाट जल बिद्युत का उत्पादन हो रहा है। इन परियोजनाओं से उत्पादित विद्युत को ग्रिड तक ले जाने के लिए हर परियोजना अपनी टावर लाईन बिछा चुकी है। अगले तीन वर्षों में हिमाचल प्रदेश में 11 हजार मैगावाट जल विद्युत का उत्पादन शुरू की योजना है। इन परियोजनाओं की टावर लाइन

भी तब तक बन जायेगी। ज्यादातर टावर लाइन मण्डी, बिलासपुर होते हुए नालागढ़ की तरफ जा रही हैं। इन इलाकों के कुछ क्षेत्रों के ऊपर टावर लाइनों का जाल बिछ जायेगा, जबकि अभी टावर लाइन का जाल कुल्लू, किन्नौर, चम्बा से होते हुए मण्डी, शिमला, बिलासपुर, सोलन व नालागढ़ की ओर दिख रहा है।

हिमालय नीति अभियान के साथी गुमान सिंह टावर लाइनों के प्रभावों को इस प्रकार बताते हैं कि–

- टावर लाईन सरकारी व निजी भूमि के ऊपर से निकल रहा है जिसके लिए केवल टावर की जगह कंपनियां खरीद या लीज पर ले रही हैं जबकि लाईन के नीचे 10 मीटर के दायरे में पेड़ों को हटाया जाता है।
- उक्त भूमि जिस के ऊपर से तारें जा रही हैं उसके नुकसान की भरपाई नहीं की जा रही है जबकि नीचे जंगल, बगीचे, खेती व रिहायशी घर भी मौजूद हैं।
- टावर लाईन की तारों की बिजली का इलेक्टो मैगनेटिक फील्ड का घेरा 100 फुट का होता है जिससे रेडिएशन फैलता है। रेडिएशन से मनुष्य, पालतू पशु, वन्य प्राणियों, पक्षियों, जंगल, सेब व अन्य फलों के बगीचों, खेती तथा अन्य जीव जगत पर भारी दुष्प्रभाव आंका गया है।
- टावर लाइन के नीचे रहने वाले मनुष्यों पर वैज्ञानिक अध्ययनों से यह साबित हो चुका है कि नपुंसकता में 5 से 10 गुणा बढ़ोतरी हो गयी है। अपंगता, चर्म, कैन्सर में 5 गुणा बढ़ोतरी आंकी गई है। रेडिएशन के कारण रक्तचाप, डिप्रेशन, गर्भपात भी हो रहे हैं। यही प्रभाव अन्य पालतु पशुओं व वन्य प्राणियों में भी देखे गये हैं। पक्षियों का तो समूल नाश हो जाता है।
- तारों के नीचे 10 मीटर तक पेड़ हटाने पड़ते हैं तथा धीरे–धीरे नष्ट हो जाते हैं। इससे बगीचों की उत्पादकता घट जाती है।
- तारों के टूटने से आग लगने व करंट का अंदेशा तो है ही। टावर लाइन युद्ध की स्थिति में सबसे ज्यादा संवेदनशील निशाने बन

जाते हैं। इतना ही नहीं ये नीचे चलने वाले हवाई परिवहन के लिए भी घातक हैं, जिसकी जरूरत आपातकाल तथा आपदा के समय बहुत होती है।

प्रदेश में कुल्लू, किन्नौर, चम्बा, मण्डी, शिमला, बिलासपुर, सोलन व नालागढ़ में लोग इसके विरोध में आंदोलन कर रहे हैं। हिमालय नीति अभियान जल्दी ही टावर लाईन की समस्या से प्रभावितों की एक बैठक आयोजित करने वाला है जिसमें आगे की रणनीति पर विचार–विमर्श किया जायेगा।

हिमालयन स्की विलेज विरोधी आंदोलनः

जिस समय उड़ीसा सरकार दक्षिण कोरिया की पोहांग स्टील कंपनी (पोस्को) के साथ भारत में अभी तक का सबसे बड़ा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश पर समझौता कर रही थी (जून 2005 में जिस मेमोरेण्डम ऑफ अण्डरस्टैंडिंग पर हस्ताक्षर किये हैं, उस प्रोजेक्ट में 51000 करोड़ रूपये का निवेश पोस्को कंपनी करेगी) उसी समय हिमाचल प्रदेश की सरकार ने ऐल्फ्रैड बुश फोर्ड की व्यापार कंपनी **'ए.बी.एफ. इंटरनेशनल'** के साथ 9 दिसंबर 2005 को **'हिमालयन स्की विलेज रिज़ॉर्ट'** के लिए अनुबंध पर हस्ताक्षर किये।

2005 में **'ए.बी.एफ. इंटरनेशनल'** ने भारत में चार पर्यटन परियोजनाओं की शुरूआत की। इसमें से तीन परियोजनाएं जो लगभग 16 करोड़ डॉलर लागत की पश्चिम बंगाल (2000 कमरों वाले होटल के साथ मायपुर तारामंडल और वानस्पतिक उद्यान–बौटेनिकल गार्डन) में है। ए.बी.एफ.इंटरनेशनल ने इन परियोजनाओं के लिए अलग–अलग कंपनियां बनाई। हिमालय स्की विलेज प्राइवेट लिमिटेड द्वारा कुल्लू जिले के मनाली तहसील में स्की विलेज निर्माण करना था। इस कंपनी का सबसे बड़ा हिस्सा ऐल्फ्रैड फोर्ड (हेनरी फोर्ड के प्रौत्र ऐल्फ्रैड फोर्ड, फोर्ड मोटर कंपनी फंड, फोर्ड फाउंडेशन, फोर्ड परिवार कार्यालय समूह और मायापुर फाउंडेशन के निदेशक हैं।) के पास है। स्की विलेज प्रोजेक्ट में 1200 करोड़ रूपये का निवेश किया जाना प्रस्तावित था। इस प्रोजेक्ट के अंतर्गत 600 बीघा

में उच्चवर्गीय पर्यटकों के लिए 4, 5 और 7 सितारा होटलों में 700 से अधिक कमरों, खरीददारी के लिए मॉल, 300 से अधिक बंगले, गंडोला, बर्फ में खेल–कूद और मनोरंजन की सुविधाएं बनाई जाएंगी। सरकार व स्की विलेज प्रबंधकों के बीच किये गये अनुबंध के अनुसार कंपनी को परियोजना क्षेत्र में बनाये गये आलीशान बंगलों को गैर हिमाचलियों को भी बेचने का अधिकार होगा। 600 बीघा के निर्माण क्षेत्र के अलावा कंपनी ने उपरी इलाके में 25000 बीघा क्षेत्र के उपयोग के अधिकार भी मांगे हैं।

कंपनी के पक्ष में माहौल बनाने के लिए सरकार एवं कंपनी का दावा है कि हिमालयन स्की विलेज प्राइवेट लिमिटेड कंपनी के इस प्रोजेक्ट से लगभग 1000 लोगों को सीधे तौर पर और 3000 लोगों को अन्य तरीकों से रोजगार मिलेगा। साथ ही हिमाचल प्रदेश सरकार को सलाना 3.5 करोड़ की रॉयल्टी मिलेगी। इस तरह के दावों की असलियत से लोग पहले ही अच्छी तरह वाकिफ हो चुके हैं।

इस प्रोजेक्ट को 133 एकड़ क्षेत्र की आवश्यकता है जो पहाड़ों के लिए एक विशाल क्षेत्र है। लगभग 12 पंचायतों के 60 से अधिक गांव, 40,000 से अधिक लोग इस परियोजना से प्रभावित होंगे। पलछान पंचायत के पांच गांवों की भूमि अधिग्रहित की जायेगी। 14.7 हैक्टेयर सरकारी भूमि को 99 साल के पट्टे पर प्राप्त करना तथा उचित दरों पर 60 हैक्टेयर तक निजी भूमि प्राप्त करना साथ ही अन्य निजी या सरकारी भूमि का अधिग्रहण जिसकी परियोजना को आवश्यकता हो, इसका प्रावधान रखा गया है। इस प्रोजेक्ट के अंतर्गत कंपनी कोठी, ब्यास और हरनोला नालों से प्रतिदिन 1440 किलोलीटर पानी अपने उपयोग के लिए लेगी। कृत्रिम–आर्टिफिशियल बर्फ बनाने के लिए जिससे स्की करने के लिए बर्फ, कुदरती बर्फ की उपलब्धता के समय से ज़्यादा समय तक मिल सके।

इस प्रोजेक्ट के अंतर्गत कंपनी को यह अधिकार दिये गये है कि वह भूमि पर स्वामित्व के अधिकारों के अतिरिक्त स्की–मार्ग व इन

पर बर्फ बनाने, स्की–मार्गों को चिन्हित करने के लिए, पिलर बनाने, तालाब बनाने, भूमिगत पानी के पाईप डालने और स्की–मार्गों के किनारे पानी के पंप और इन मार्गों की व्यवस्था के लिए पट्टे (लीज़) की अवधि तक के लिए 'लाइसेंस' दिये जायेंगे। यही नहीं कंपनी द्वारा आमंत्रित लोगों को परियोजना क्षेत्र में पानी, स्की मार्गों पर बिना रोक–टोक के बार–बार आने–जाने का अधिकार होगा।

हिमालय नीति अभियान के साथी गुमान सिंह बताते है कि स्की विलेज में रहने व मनोरंजन की सुविधाओं के अंतर्गत गोन्डोला, गरारियां व स्की क्षेत्रों का निर्माण 7,500 फीट से 14,000 फीट की ऊंचाई पर किया जायेगा। यह क्षेत्र व्यास नदी के बाएं किनारे पर पलछान गांव से शुरू होता है। इस क्षेत्र में निर्माण कार्य करने के लिए बड़े स्तर पर वनों की कटाई करनी पड़ेगी। इन पहाड़ियों पर इस प्रकार के निर्माण कार्यों का प्रभाव यहां के पूरे पारिस्थितिकी संतुलन पर पड़ेगा। जंगल में पेड़ों के कटने के कारण यहां के जीव–जंतुओं और वनस्पतियों पर भी असर पड़ेगा। इसके साथ–साथ भूमि कटाव में बढ़ोतरी से पहाड़ियों में पानी की कमी, बाढ़ व भूस्खलन की संभावना बढ़ेगी और खेती एवं निचले इलाकों में बने बांधों में जरूरत से ज़्यादा मात्रा में गाद इकट्ठी हो जायेगी। इन बर्फीले मैदानों में कई प्रकार के औषधीय पौधे भी पाये जाते हैं। **मोनाली पक्षी एवं कस्तूरी मृग जैसे दुर्लभ जंगली जानवर यहां अभी भी पाए जाते हैं।** गुमान सिंह बताते हैं कि हम लालचंद कटोच व अन्य साथियों के साथ मुख्यमंत्री, डीसी से मिले तथा इन भयावह स्थितियों के बारे में बताया, विशेषज्ञों–वैज्ञानिकों–पर्यावरणविदों की चिंता से उन्हें अवगत कराया परंतु सरकार ने कान में रूई डाल रखी है। **वास्तव में इन कंपनियों की निगाह पहाड़ों की जमीन पर, झरनों के पानी और पर्यटन उद्योग पर है।**

स्की विलेज आंदोलन की शुरूआत एम.ओ.यू. पर हस्ताक्षर होने (9 दिसंबर 2005) के बाद कुल्लू जिले के स्थानीय निवासियों के एक समूह **'जन–जागरण विकास समिति'** द्वारा इस मुद्दे पर 10 जनवरी 2006 को पहली गोष्ठी का आयोजन किया गया। स्की

विलेज योजना के विरोध में आंदोलन पर विचार–विमर्श किया गया। लालचंद कटोच और पुष्पाल सिंह ठाकुर की अगुवाई में इस मुद्दे को उठाने का निर्णय लिया गया। इसके बाद लगातार लोगों के बीच कंपनी के विरोध में संघर्ष जारी रहा उसी का नतीजा था कि **जून 2006 में 12 में से 10 प्रभावित पंचायतों ने परियोजना के खिलाफ प्रस्ताव पारित कर दिया।**

6 जून 2007 को उच्च न्यायालय में जनहित संघर्ष समिति की ओर से जनहित याचिका (पी.आई.एल.) दाखिल की गई। मुकदमे में सरकारी विभाग, वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, कंपनी सहित 6 प्रतिवादी बनाये गये। इसके बाद वशिष्ठ पंचायत के एक होटल व्यवसायी ने भी इस मामले में पी.आई.एल. दाखिल कर दी। इस मुकदमे के तहत रक्षा मंत्रालय सहित 10 पक्षों को प्रतिवादी बनाया गया। उच्च न्यायालय द्वारा दोनों ही पी.आई.एल. को एक साथ जोड़ दिया गया। 18 जून 2007 को परियोजना के विरोध में व्यापक विरोध प्रदर्शन एवं रैली हुई जिसमें देशभर के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

30 अप्रैल 2008 को उच्च न्यायालय ने जनहित याचिका पर निर्णय देते हुए राज्य स्तरीय कमेटी को परियोजना के आकलन की जिम्मेदारी सौंपी।

हालांकि लोगों के विरोध से यह प्रोजेक्ट अभी सक्रिय नहीं है और न ही प्रशासन ने इसे रद्द करने की अभी कोई घोषणा की है और संघर्ष भी अनवरत जारी है।

शाल घाटी बचाओ आंदोलनः

प्रदेश का चम्बा जिला देश के सबसे गरीब 50 जिलों में से एक है। यहां गरीबी व बेरोजगारी हर वर्ष बढ़ती जा रही है। जनता के प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित पारम्परिक काम–धन्धे को तथाकथित विकास के नाम पर कुर्बान किया जा रहा है। 1998 के आंकड़ों के अनुसार चम्बा जिले में 76,418 परिवार हैं जिसमें 47,165 परिवार गरीबी रेखा से नीचे हैं। इस तरह 61.7 प्रतिशत लोग गरीबी

रेखा के नीचे अपना जीवन यापन कर रहे हैं और आज यह आंकड़ा लगभग 60 हजार परिवार के आसपास पहुंच गया है।

चम्बा जिले में रावी नदी की कुल लंबाई चम्बा से बंजोली तक 70 किलोमीटर है जिस पर निर्माणाधीन एवं प्रस्तावित लगभग दो दर्जन जल विद्युत परियोजनाओं के कारण रावी नदी का पानी केवल 3 किलोमीटर के क्षेत्र में ही उपलब्ध रहेगा जबकि रावी नदी के पानी को सुरंगों के माध्यमों से डाइवर्ट करने के कारण नदी का 67 किलोमीटर क्षेत्र विलुप्त हो जायेगा। इससे जैविक विविधता, पर्यावरण और लोगों के जीवन पर भयावह संकट आ जायेगा। इन परियोजनाओं का विवरण इस प्रकार है–

- चमेरा–I 540 मेगावाट
- बइरा सियूल 198 मेगावाट
- साल–I 6.50 मेगावाट
- होली 3 मेगावाट
- भूरी सिंह पी/हाउस 0.45 मेगावाट
- किल्लार 0.30 मेगावाट
- थिरोट 4.50 मगावाट
- साल–II 2 मेगावाट
- चमेरा–II 300 मेगावाट
- चमेरा–III 231 मेगावाट
- साई कोठी 17 मेगावाट
- हरसार 60 मेगावाट
- भारमोर 45 मेगावाट
- बुधिल 70 मेगावाट
- चांजू–I 25 मेगावाट
- चांजू–II 17 मेगावाट
- बारा बंघाल 200 मेगावाट
- बंजोली–होली 180 मेगावाट
- कुथेर 260 मेगावाट
- सियूल 13 मेगावाट

प्रदेश के चम्बा जिले में 1980 के दशक में चमेरा डैम का निर्माण किया गया था। इस डैम से विस्थापित आज भी पुनर्वास के लिए संघर्ष कर रहे हैं उनका अभी सरकार सही एवं

सम्मानजनक पुनर्वास कर भी नहीं पायी थी कि **सरकार अब इस शाल घाटी में एक के बाद एक लगातार दो दर्जन हाइड्रो जल विद्युत परियोजनाओं को शुरू करने जा रही है।** एक ही नाले पर कई–कई परियोजनाएं शुरू कर दी गई हैं। जैसे– हुलनाला माइक्रो–हाइड्रो परियोजना I, हुलनाला माइक्रो–हाइड्रो परियोजना II। इन हुलनाला माइक्रो–हाइड्रो प्रोजेक्टों से 85 घराट बन्द होने से 120 परिवारों की आजीविका छिन गई। चमीणू, बरौर, घमैटी, जडेरा, सुन्गल, मरेडी, अन्दरालु, लन्जी, चम्बी इत्यादि गांवों के खेतों की सिंचाई इसी नाले (हूल) से होती है, जो इससे वंचित हो गये हैं। इसी तरह के दुष्प्रभाव शाल नाले पर निर्माणाधीन जल विद्युत प्रोजेक्टों से हुए हैं।

आज प्रदेश की जनता पर इस तरह के छोटे नालों पर बनने वाले इन माइक्रो–हाइड्रो जल विद्युत प्रोजेक्टों से स्थानीय आजीविका पर सबसे ज्यादा बुरा प्रभाव पड़ा है।

शाल घाटी बचाओ आंदोलन की शुरूआत 1982 में हुई थी। उस समय पर्यावरण संरक्षण मुख्य मुद्दा था। इस मुद्दे पर पहल करने के लिए हिमालय बचाओ समिति के पर्यावरणविद श्री कुलभूषण उपमन्यु के नेतृत्व में एक समिति का गठन किया गया। पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्य से शुरू हुई समिति आज भू–अधिग्रहण, वन भूमि अधिग्रहण, विस्थापन आदि के विरोध में चल रहे संघर्षों में भी मुख्य भूमिका निभा रही है।

वर्तमान विकास के इस मॉडल से त्रस्त लोगों ने शाल घाटी बचाओ संघर्ष समिति के नाम से मुहिम शुरू की है, जो शाल घाटी में निर्माणाधीन एवं प्रस्तावित माइक्रो–हाइड्रो प्रोजेक्टों के विरोध में संघर्षरत है। लेकिन **सरकार लोगों के संघर्ष को दबाते हुए कंपनियों को खुली छूट दे रही है।**

अप्रैल 2010 में शांतिपूर्ण धरने पर बैठे लोगों पर पुलिस द्वारा हमला किया गया जिसमें ज्ञानचंद सहित कई अन्य साथी घायल हुए। आंदोलनों के साथियों पर स्थानीय गुण्डे या जिस

राज्य की कंपनी अपना प्रोजेक्ट लगा रही है या शुरू करने वाली है वहां के वेतन भोगी गुण्डे आये दिन उनको डराते, धमकाते और उनके साथ मारपीट करते रहते हैं। इसी क्षेत्र में होलीनाला 125 मेगावाट का एक प्रोजेक्ट लग रहा है जिसका स्थानीय लोगों ने विरोध किया तो कम्पनी ने पुलिस के साथ मिलकर उन पर झूठे केस दायर कर दिये।

पब्बर नदी घाटी बचाओ आंदोलनः

पब्बर नदी घाटी क्षेत्र में पांच माइक्रो–हाइड्रो जल विद्युत परियोजनाओं की घोषणा सरकार द्वारा की जा चुकी है। एक परियोजना निर्माणाधीन है। इस नदी घाटी के दोनों तरफ सीमेंट फैक्टरियां भी निर्माणाधीन हैं।

इस नदी पर 100 से ज्यादा लिफ्ट सिंचाई व पेयजल की परियोजनाएं हैं जिसमें 1166 करोड़ की पीने के पानी की परियोजना शिमला शहर के लिए प्रस्तावित है। इस स्थिति के कारण स्थानीय लोगों की आजीविका संकट में आ गयी है। इन परियोजनाओं के तहत सुरंग निर्माण होने से लोगों के परम्परागत जल स्रोत सूख रहे हैं।

आज इस नदी की स्थिति यह हो गयी है कि 72 किलोमीटर लम्बी इस पब्बर नदी का 68 किलोमीटर हिस्सा सुरंगों में और शेष हिस्सा 4 किमी. जलाशय में तब्दील हो गया है, तो नदी कहां बचेगी?

लुहरी जल विद्युत परियोजना विरोधी आंदोलनः

हिमाचल प्रदेश सरकार ने लुहरी 700 मेगावाट जल विद्युत परियोजना का प्रस्ताव पारित किया है। इस परियोजना के तहत सतलुज नदी का पानी नीरथ से विन्दला गांव तक एक सुरंग के माध्यम से जायेगा। नीरथ से विन्दला तक की सड़क से दूरी 60 किलोमीटर है जबकि सुरंग के माध्यम से यह लंबाई 38 किलोमीटर होगी। 60 किलोमीटर की इस लंबाई में नदी के दोनों तरफ के लगभग 2 लाख

लोग प्रभावित होंगे।

- सतलुज नदी का पानी नीरथ से विन्दला तक 38 किलोमीटर लंबी सुरंग में डाला जाना प्रस्तावित है। इस से सतलुज नदी का 60 किलोमीटर का वर्तमान स्वरूप पूरी तरह से सूख जायेगा। जिससे तापमान में वृद्धि होगी तथा लोगों, जानवरों, पक्षियों का अस्तित्व संकट में आ जायेगा।
- **38 किलोमीटर लंबी सुरंग 17 पंचायतों के नीचे से पहाड़ में ब्लास्टिंग करके निकाली जायेगी।** इसके अलावा कई जगह मलबा बाहर निकालने के लिए छोटी सुरंगे व कई किलोमीटर सड़कों के लिए भी ब्लास्टिंग होगी, जिसके परिणामस्वरूप बावड़ी, नालों, चश्मों तथा अन्य पानी के स्रोत सदा के लिए गायब हो जायेंगे और घरों में भी दरारें पड़ेंगी।
- लंबी सुरंग व सड़कों के निर्माण से निकाला गया मलबा बेतरतीब तरीके से वन भूमि पर, पहाड़ की ढलानों पर व नदी नालों में फेंका जायेगा, जिससे वन नष्ट होंगे व पशु चराव सदा के लिए खत्म हो जायेगा। जहां पर मलबा फेंका जाना है उसके आसपास की कृषि भूमि प्रभावित होगी तथा किसानों के फसल का नुकसान कई वर्षों तक होता रहेगा। यह नुकसान उस वन भूमि के अतिरिक्त है, जो कि कंपनी सरकार से कानूनी तौर पर इस्तेमाल के लिए लेगी।
- परियोजना में सुरंग, सड़क निर्माण, मलबा फेंकने व हजारों गाड़ियों की आवाजाही से धूल, मिट्टी और धुआं उड़ेगा, जिससे परियोजना के नज़दीक ही नहीं बल्कि दूर–दूर के खेतों, वनों में पैदावार घटेगी तथा लोगों को प्रदूषण के कारण नई–नई बीमारियां होंगी।

यह सब कुल्लू, चम्बा और किन्नौर की परियोजनाओं में हुआ है। जबकि परियोजना शुरू करने से पहले यह आश्वासन दिया गया था कि कोई नुकसान नहीं होगा। जिन गांवों के नीचे से सुरंगे निकाली गई हैं वहां पानी के स्रोत सूख चुके हैं।

इस प्रोजेक्ट के विरोध में आंदोलन की शुरूआत 6 जून 2010 में

लुहरी में आयोजित बैठक से हुई। इस बैठक में प्रभावित पंचायतों के सरपंच तथा स्थानीय लोगों ने भाग लिया। बैठक में निर्णय लिया गया कि इस प्रोजेक्ट से व्यापक आबादी पर प्रभाव पड़ेगा तथा क्षेत्र के लोगों को इस प्रोजेक्ट के दुष्परिणामों के बारे में बताया जाय।

संघर्षों के समक्ष चुनौतियांः

आज साझी रणनीति एवं विकल्प पर एक आम सहमति कायम करना एक बड़ी चुनौती है। हिमाचल प्रदेश के जन संघर्षों में उनकी स्वयं अपने–अपने आंदोलन की कोई स्पष्ट दूरगामी रणनीति नहीं है अतएव साझी रणनीति का निरूपण आसान कार्य नहीं है। इसके जायज कारण भी हैं–

- **सभी आंदोलनों का नेतृत्व एक जैसा नहीं है, उनकी सोच एवं नजरिये में भी भिन्नता है।**
- **हर आंदोलन की अपनी स्थितियां/परिस्थितियां तथा शामिल हितग्राही समूह अलग–अलग हैं।**
- **अधिकांश जन संघर्ष तात्कालिक मामलों पर ही केन्द्रित हैं तथा उनके पास पूर्व अनुभव भी नहीं है।**
- **लोगों के पास स्थानीय अनुभव ही हैं। वे स्थानीय संघर्ष पर ही विचार–विमर्श, चर्चा–परिचर्चा तथा योजनायें बनाते हैं।**
- **जन आंदोलन स्वतः स्फूर्त हैं तथा अपने अनुभवों से सबक लेकर आगे बढ़ते रहे हैं। अतएव अन्य आंदोलनों के अनुभवों से सीखने–सबक लेने की इच्छा उनमें कम ही दिखती है।**
- **सभी संघर्षों की अपनी–अपनी योजनायें हैं परंतु रणनीति नहीं है। हिमाचल प्रदेश के संघर्षों से जुड़े साथियों का मत है कि जन संघर्षों पर कोई बाहरी रणनीति प्रत्यारोपित नहीं की जा सकती है। उन्हीं संघर्षों से अनुभव अर्जित करके अपने आप एक स्पष्ट रणनीति उभरकर आयेगी।**
- **जन संघर्षों से जुड़े अगुआकारों की आपस में साझे अभियान पर संभवतया चर्चा नहीं हो पाती है। साझे कार्यक्रमों (धरना, रैली, सम्मेलन) तक ही साझी पहल**

सीमित रही है। इसीलिए साझी पहल के महत्व, जरूरत तथा साझे पहल के लिए साझी रणनीति का मामला पीछे छूट गया है। 'न्यूनतम सहमति और अधिकतम योगदान' की पहल नहीं हो पायी है।

इन हालात में हिमाचल प्रदेश के संघर्षो के अगुआकार इन बातों से खासतौर पर चिंतित हैं:–

- लोग भविष्य के बारे में नहीं सोचते हैं वे तात्कालिक लाभ कमाने के चक्कर में कम्पनियों की दलाली में लग जाते है उनकी सोच को कैसे बदला जाये ?
- पैसे का लालच जैसे– नालागढ़ के प्रधान को हेलीकॉप्टर से चण्डीगढ़ की यात्रा करवाकर जेपी कम्पनी ने अपने पक्ष में कर लिया। इस तरह की समस्या से कैसे निपटा जाय।
- लोगों में आत्मविश्वास की कमी है उन्होंने यह धारणा बना ली है कि इन बड़ी–बड़ी कम्पनियों का मुकाबला कैसे कर पायेंगे ?
- अधिकतर जनसंघर्ष स्वतः स्फूर्त है उनके पीछे कोई राजनैतिक पृष्ठभूमि नहीं है। जनसंघर्षों का राजनीतिकरण कैसे किया जाये ?
- प्रदेश के जनसंघर्षों में महिलाओं का नेतृत्व नहीं उभर रहा है। महिला नेतृत्व को कैसे विकसित किया जाये ?
- पर्यावरण, शराब बंदी के लिए चलने वाले आंदोलनों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व ज्यादा होता है जबकि उसी क्षेत्र में जल परियोजनाओं के विरोध में चल रहे आंदोलन में महिलाओं की भागेदारी कम हो रही है। महिलाओं की भागेदारी को विस्थापन विरोधी आंदोलन, परियोजना विरोधी आंदोलनों में कैसे बढ़ाया जाये ?
- स्थानीय आंदोलनों से राज्य स्तर का कोई नेतृत्व नहीं उभर कर आ पा रहा है।
- अधिकांश जनसंघर्ष तात्कालिक उद्देश्यों जैसे– अपनी जमीन, जंगल, संसाधन नहीं देगे पर ही केन्द्रित है।

आज देश के तमाम राज्यों में विकास के दमनकारी मॉडल के विरोध में जो संघर्ष चल रहे हैं, उनमें ऊना में सेज़ के खिलाफ चल रहा आंदोलन महत्वपूर्ण तथा प्रेरणादायक हैं। यहां मातृभूमि संघर्ष समिति नाम के एक संगठन में लगभग 10 हजार काडर हैं जिनमें आश्चर्यजनक रूप से 70 फीसदी महिलाएं हैं। पिछले 2 साल के दौरान सेज़ के खिलाफ इस संगठन ने ऐतिहासिक संघर्ष किया है। संघर्ष समिति के साथी नरेन्द्र परमार कहते हैं कि उनके पास बहुत लंबा समय नहीं है। वह जितना जल्दी हो सके, **विदेशी पूंजी को अपनी धरती से भगाना चाहते हैं। वह साफ कहते हैं कि अपनी समस्याओं पर बात करने के लिए सांसदों–विधायकों को बुलाने का कोई फायदा नहीं क्योंकि सभी नेता बिक चुके हैं।** परंतु लाख टके का सवाल है, यह सब करने की सुविचारित–सुस्पष्ट रणनीति क्या होगी?

हिमाचल के जनसंघर्षों के एक साथी गुमान सिंह कुछ इस प्रकार सवाल उठाते हैं– क्या अकेले हिमाचल में ही संघर्ष करके हम कामयाब हो पायेंगे? **क्या इस विनाशकारी व्यवस्था का कहर केवल हिमाचल और भारत पर ही है? आस्तीन के सांपों तथा सात समुन्दर पार बैठे शत्रुओं के कृत्यों, साजिशों से कैसे निपटा जाय? अपनी विजय को कैसे सुनिश्चित किया जाय? यह सवाल हिमाचल प्रदेश एवं भारत ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया के जनसंघर्षों के सामने है और अंत में वे विश्वास व्यक्त करते हैं कि हम इन सवालों को हल करेंगे और जीत हमारी होगी।**

विरोध–प्रतिरोध स्थानीय स्तर पर सशक्त होगा तथी क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर निर्णायक संघर्षों का बीजारोपण हो पायेगा।

पॉपुलर एजूकेशन एण्ड एक्शन सेंटर (पीस) प्रतिबद्ध और अनुभवी लोगों का ऐसा समूह है जो स्थानीय एवं व्यापक स्तर पर सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को मजबूत करने की दिशा में प्रयत्नशील है।

इस क्रम में जीवनयापन के लिए जूझ रहे व्यक्तियों एवं समुदायों और अपनी अस्मिता को बचाए रखने तथा जनतांत्रिक मूल्यों के लिए संघर्षरत जन समूहों की जानकारी एवं ज्ञान में बढ़ोत्तरी करना पीस का मुख्य विगत कुछ वर्षों से पीस समान सोच वाले समूहों और जन संगठनों के बीच संवाद की प्रक्रिया चला कर व्यापक स्तर पर चलने वाले जन संघशों और गठबंधनों की प्रक्रिया तथा उनकी एकजुटता को भी मज़बूत करने हेतु प्रयत्नशील है।

मौजूदा पुस्तिका की तर्ज़ पर हमने पहले भी आम जन जीवन को प्रभावित करने वाले मुद्दों पर शिक्षण सामग्री का निर्माण व प्रकाशन किया है। इस क्रम में कुछ महत्वपूर्ण सामग्री निम्न हैं:

- ज्ञान की पूँजी पर पूँजी का शिकंजा
- पूँजी के निशाने पर पानी
- बाजारीकरण के दस साल
- The Noose is Tightening - AOA (July Framework)
- Gats (Primer)
- नकेल कसती जा रही है
- Struggle India
- कहीं पर निगाहें , कहीं पर निशाना : वन अधिकार अधिनियम 2006
- उड़ीसा के जनसंघर्ष : सबक और चुनौतियाँ
- PEOPLE'S STRUGGLES OF ORISSA : Lessons and Challenges
- परमाणु ऊर्जा : सस्ती साफ बिजली या महाविनाश को बुलावा!

PEACE